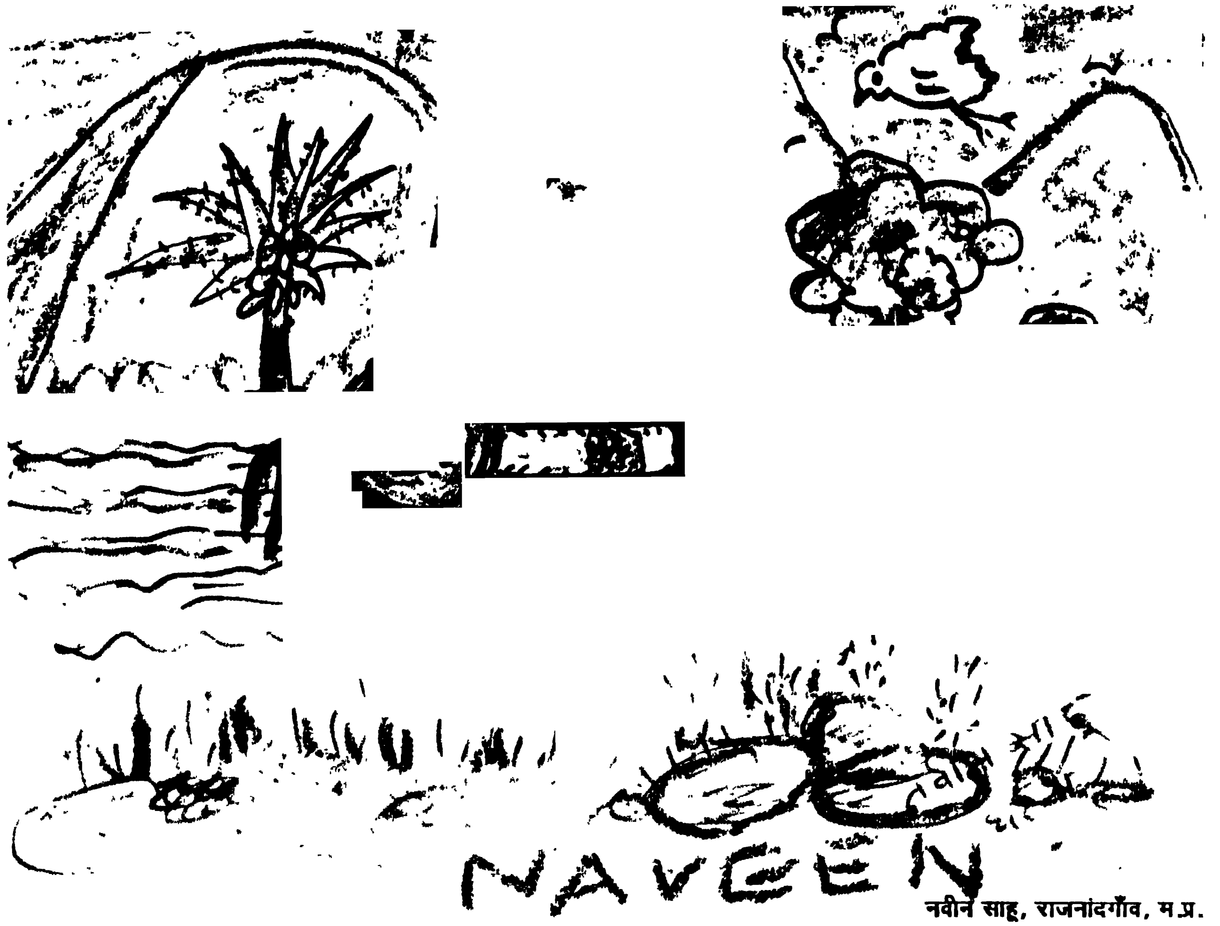

नवीन साहू, राजनांदगाँव, म.प्र.

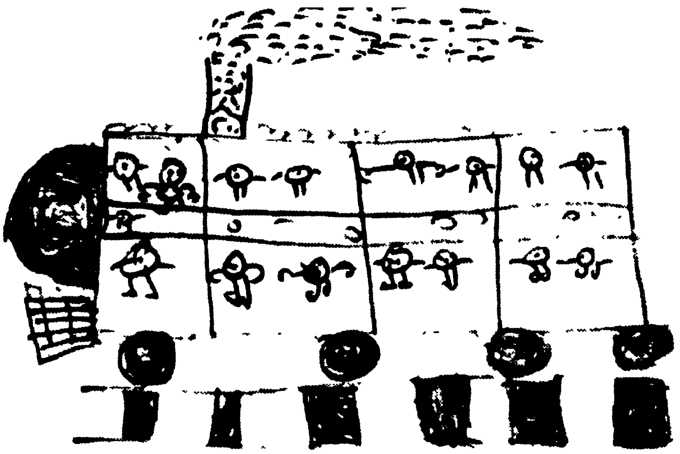

सपना पोरवाल, सात वर्ष, बालागुडा, मन्दसौर, म.प्र.

चकमक

मासिक बाल विज्ञान पत्रिका

वर्ष:10 अंक:3 सितम्बर, 1994

संपादक

विनोद रायना

सह-संपादक

राजेश उत्साही

कविता सुरेश

संपादन सहयोग

टुलटुल विश्वास

कला-सज्जा

जया विवेक

उत्पादन/वितरण

कमलसिंह, मनोज निगम

चकमक का चंदा

एक प्रति . पांच रुपए

छमाही . पच्चीस रुपए

वार्षिक . पचास रुपए

डाक खर्च मुफ्त

चंदा, मनीआर्डर या बैंक ड्राफ्ट से एकलव्य के नाम पर भेजें।

कृपया चेक न भेजें।

कागज़ : यूनिसेफ के सौजन्य से।

पत्र/चंदा/रचना भेजने का पता

एकलव्य,

ई-1/208,

अरेरा कॉलोनी,

भोपाल-462016

(म. प्र.)

फ़ोन : 563380

109वें अंक में

विशेष

9 ❑ पढ़ाई का बोझ

18 ❑ तोत्तोचान

कविताएँ

8 ❑ कितने बिन्दु

26 ❑ आ गया है सावन

36 ❑ तुम भी आना

कहानी

28 ❑ उड़ने का सुख

धारावाहिक

37 ❑ मनुष्य महाबली कैसे बना?–13

हर बार की तरह

2 ❑ मेरा पन्ना

15 ❑ खेल काग़ज़ का

16 ❑ चित्रकथा : क़िस्सा आफ़न्ती का

24 ❑ माथापच्ची

27 ❑ हमारे वृक्ष –29 : अशोक

और यह भी

32 ❑ तुम भी बनाओ

34 ❑ चर्चा किताबों की

आवरण : विवेक

एकलव्य एक स्वैच्छिक संस्था है जो शिक्षा, जनविज्ञान एवं अन्य क्षेत्रों में कार्यरत है। चकमक, एकलव्य द्वारा प्रकाशित अव्यवसायिक पत्रिका है। चकमक का उद्देश्य बच्चों की स्वाभाविक अभिव्यक्ति, कल्पनाशीलता, कौशल और सोच को स्थानीय परिवेश में विकसित करना है।

छोटा-सा सिक्का

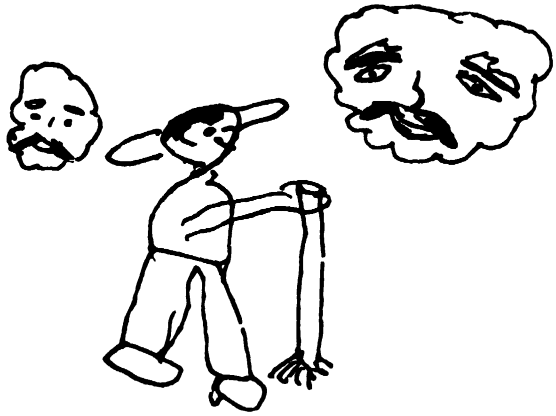

मैं हूँ छोटा सा एक सिक्का
एक दिन मैं बहुत चमक रहा था
खूब मैं सजा-धजा था
कि तभी गिर पड़ा नाली के अन्दर
सारी दूर हुई चमकाहट
फिर से हुआ मैं काला कलूटा
अगले दिन आया जमादार
वो था बड़ा ही वफ़ादार
उसने मुझे उठाया फिर से चमकाया
फिर रख लिया पाकेट के अन्दर
घर जाकर उसने दिया बेटे को अपने

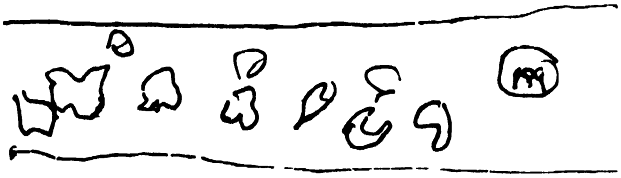

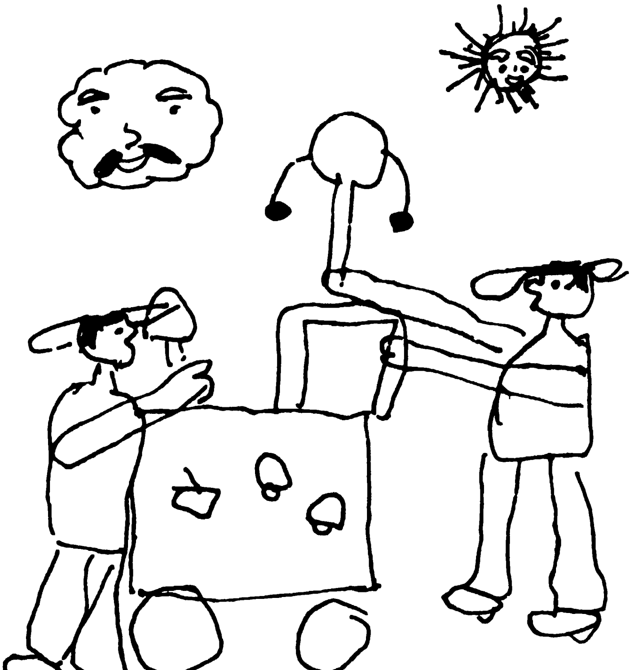

जिसका नाम था फूसा
उसने कर दिया खर्च मुझे
मेरे बदले मिली आइसक्रीम उसे
उसका रंग था पीला
उसका स्वाद था मीठा
अब था मैं आइस्क्रीम वाले के पास
नाम था उसका रूलटू राम
दिया उसने मुझे भिखारी को
भिखारी ने दिया एक रोटी के बदले
रोटी वाला था बड़ा ही मक्खीचूस
जब था मैं उसकी पाकेट में

उसकी पाकेट से चुरा लिया किसी ने
डर तो गया था मैं बहुत
पीली उसने मेरे बदले में चाय
चाय वाले का नाम था खदलेमल
काफी दिन रहा मैं उसकी पाकेट में
एक दिन ले गया वो मुझे होटल पे
थोड़ी-सी विस्की पी ली मैंने भी
उसकी पाकेट से गिर गया मैं नशे में
तब वहाँ आया होटल का बेयरा

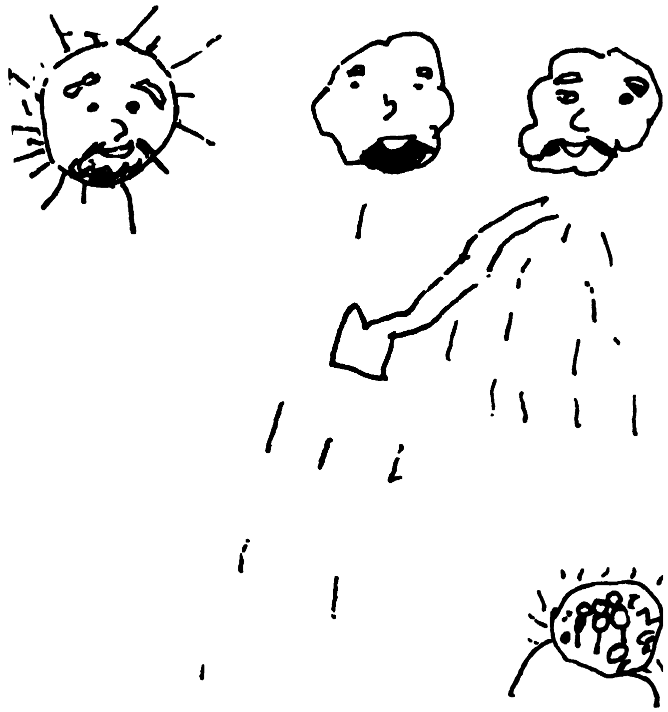

देखकर मुझको चमका उसका चेहरा
काम था उसका बड़ा गलत
पहुँचाता था इधर का माल उधर
इस चक्कर में गिरा मैं गढ्डे में
ढक लिया मुझे मिट्टी ने
एक दिन आई ज़ोरदार बरसात
निकला मैं कीचड़ से बाहर, हुई खुशी बहुत
बहुत दिनों बाद मैंने देखा सूरज
फिर से सजा धजा मैं खूब
फिर से निकल पड़ा मैं आगे
मैं हूँ छोटा-सा एक सिक्का
एक दिन मैं बहुत चमक रहा था
खूब मैं सजा धजा था।

❑ विवेक गर्ग, दसवीं, पटियाला, पंजाब
सभी चित्र : रोहित, सात वर्ष, भोपाल, म.प्र.

लुटे भी, पिटे भी

तब मैं तक़रीबन आठ साल का था। मैं और पिता जी और मेरी बहन स्कूटर से डाल्टनगंज, बिहार से सरगुजा ज़िला, मध्यप्रदेश जा रहे थे। जाते-जाते शाम हो चली। थोड़ा-थोड़ा अन्धेरा भी होने लगा। रास्ता जंगली था। जंगली इलाका समझकर मेरे पिता जी ने स्कूटर की रफ़्तार तेज़ कर दी। जंगल का इलाका ख़त्म हो गया। हम लोग सड़क पार कर जैसे ही पुल पर चढ़े, तभी दो आदमियों ने आकर ज़ोर-ज़ोर से आवाज़ दी, ''ए कहाँ जा रहे हैं, रुको।''

पिता जी ने सोचा कोई अजनबी आदमी हैं। यह सोचते हुए उन्होंने स्कूटर रोक दी। रोकते ही दो आदमी दौड़कर स्कूटर के आगे आ गए। दो आदमी डडा लिए हुए झाड़ी से निकले और तेज़ी से मेरी बहन को गोद में उठा लिया और बोले, ''बाबू, जितना भी पैसा है सब यहीं दे दो। नहीं तो आज तेरी बच्ची और बच्चे की जान नहीं बचेगी।''

पिता जी ने गाड़ी में पेट्रोल टंकी फुल कर ली थी। इसलिए लगभग दो सौ रुपए मात्र बचे थे। पिता जी ने वह पैसा झट से निकालकर दे दिया। उन लोगों ने पिता जी की घड़ी पर नज़र डाली और उसे भी खोलकर रख लिया। और ऊपर से दो डंडे मुझे, दो डंडे मेरी बहन को और एक घूंसा मेरे पिता जी को जमाया।

पिता जी को जो घूंसा मारा था वह बहुत ज़ोरदार मारा था। और फिर उन लोगों ने हमसे कहा कि, ''आईंदा कभी इस रोड पर नज़र मत आना।''

फिर पिता जी से कहा, ''अपने घर का पता दो वर्ना इन दोनों को वह घूंसा मारेंगे कि नानी याद आ जाएगी।'' पिता जी ने गलत पता लिखवाया। फिर उन लोगों ने कहा कि, ''अब जाओ। और कोई पूछेगा तो- बतलाना कि स्वागत हुआ है।''

पिता जी ने वहाँ से स्कूटर दौड़ाई और रामानुजगंज थाना मे रपट दर्ज कराते हुए हॉस्पिटल गए।

अली असगर खान
डाल्टनगज, पलामू, बिहार

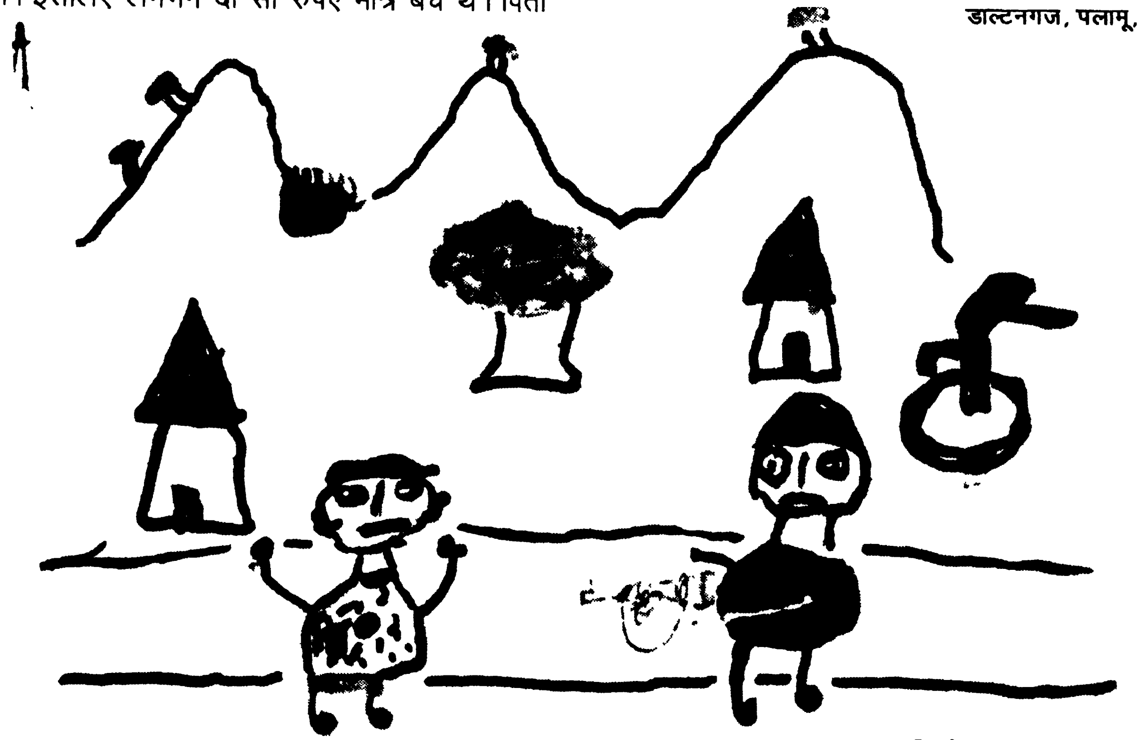

धनराज भगत, बागली, देवास, म.प्र.

निशानेबाज़

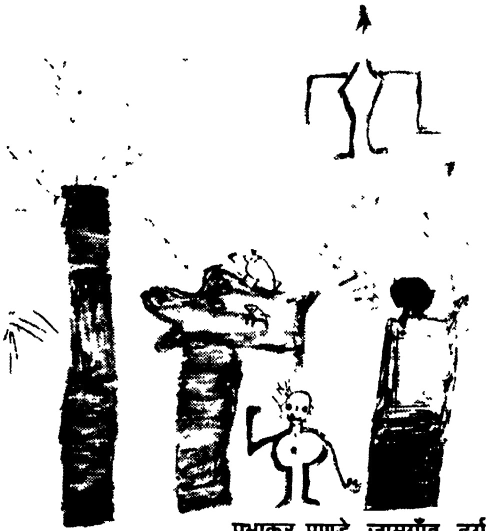
प्रभाकर पाण्डे, जामगाँव, दुर्ग, म.प्र.

तापस मेरे से एक वर्ष उम्र में छोटा है। मेरी उम्र लगभग चौदह वर्ष की है। तापस का घर मेरे घर से थोड़ी दूर पर है। तापस को गुलेल से निशाना लगाना बहुत अच्छा लगता है। हम दोनों कोई भी खेल मिलकर खेलते हैं। मज़े की बात है कि हम दोनों साथ घूमते–फिरते हैं, बात करते हैं लेकिन हमने आज तक पढ़ाई के बारे में बात नहीं की। मई माह के बाद मैं अपना रिज़ल्ट लाया। सभी दोस्तों ने पास होने की ख़बर सुनाई। कुछ दिन बाद मैंने उसका रिज़ल्ट पूछा। मैं समझ रहा था वह फेल हो गया। लेकिन उसने बताया कि मैं अपना रिज़ल्ट नहीं लाया। कुछ दिन बाद पता चला कि वह पास हो गया है।

हर दिन की तरह आज भी हम घूमने गए। घूमते–घूमते देर हो गई थी। हम लगभग तालाब के किनारे पर थे। वहाँ कुछ लोग टहल रहे थे। और तालाब के इस तरफ जिधर घास थी, कुछ लोग गाय-भैंस चरा रहे थे। हम दोनों मिलकर कंचियाँ खेलने लगे। उसके बाद हम दोनों पर्यावरण (पर्यावरण नियोजन एवं समन्वय संगठन) के जंगल में घूमने गए। तापस के एक हाथ में गुलेल लटकी थी और दूसरे हाथ में कंचों से भरा डिब्बा था। उसने मुझसे कहा, "यह डिब्बा पकड़, मैं चिड़ियों का निशाना लगाऊँगा।"

कुछ देर में हम पेड़ के नीचे पहुँचे। पेड़ शीशम का था और उसमें इतनी घनी पत्तियाँ नहीं थीं। उस पर एक चिड़िया बैठी दिखी। तापस ने मुझे धीरे-से कहा, "कंचियाँ दो।"

उसने मुझे चुपचाप खड़े रहने को कहा। उसने गुलेल में कंचा फँसाकर खींचा। कंचा चिड़िया के पंख पर लगा। चिड़िया पंख फड़फड़ाकर दूसरे पेड़ पर बैठ गई। तापस ने उसका पीछा किया। मैंने देखा कि चिड़िया न बैठ पा रही थी और न उड़ पा रही थी। वह डंगाल में अटक गई थी। तापस ने डंगाल हिलाई, चिड़िया नीचे गिर गई। चिड़िया के कान से खून बह रहा था। तापस ने उसे हाथ में उठाकर देखा, तब तक वह मर चुकी थी।

वह पेड़ लगभग सड़क के किनारे पर था। पास में ही एक अन्धा आदमी और उसका बेटा कुत्ते को लिए टहल रहे थे। हमारी बातें उन्हें सुनाई दीं। उन्होंने पास आकर पूछा, "क्या कर रहे हो?"

तब मैंने उन्हें बताया, "हमने एक चिड़िया मारी है।" उस अन्धे आदमी ने कहा, "क्या चिड़िया खाने वाली है?"

मैंने कहा, "यह चिड़िया खाने वाली नहीं है।"

अन्धे आदमी ने कहा, "फिर तुमने उसका शिकार क्यों किया?"

हम दोनों सोच में पड़ गए। थोड़ी देर बाद वह आदमी वहाँ से चला गया। तापस ने बहुत अफ़सोस किया। फिर उसने मुझसे कहा कि अब मैं कभी भी चिड़िया को नहीं मारूँगा। हम घर लौट गए।

तापस ने गुलेल से कंचियाँ मारना नहीं छोड़ा लेकिन वह अब बेजान वस्तुओं पर निशाना लगाता है। वह निशानेबाज़ बनना चाहता है।

❑ रमेश मोरे, आठवीं, भोपाल, म.प्र.

मोहित कुमार कुर्मी, आठवीं, गाडरवारा, म.प्र.

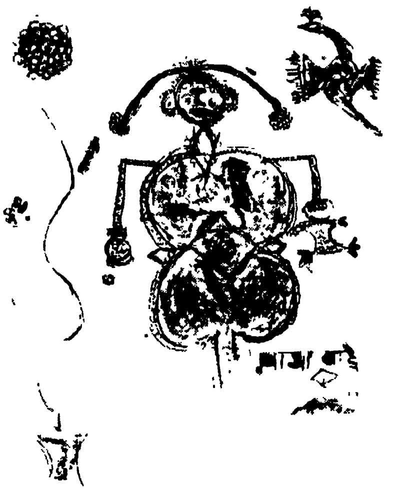

माया बाई, पाँचवीं, मछलगाँव, खरगोन, म.प्र.

शोभा श्रीवास्तव, आठवीं, उँचिया, दतिया, म.प्र.

विवेक श्रीवास्तव, तीसरी, डोगरीखुर्द, ललितपुर, उ.प्र.

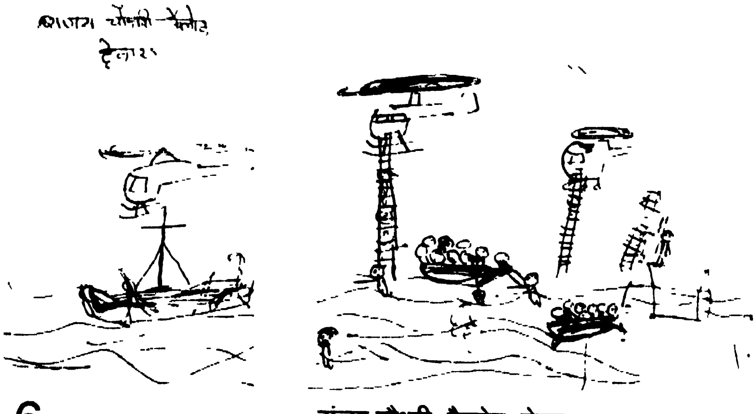

संजय चौधरी, कैलोद, देवास, म.प्र.

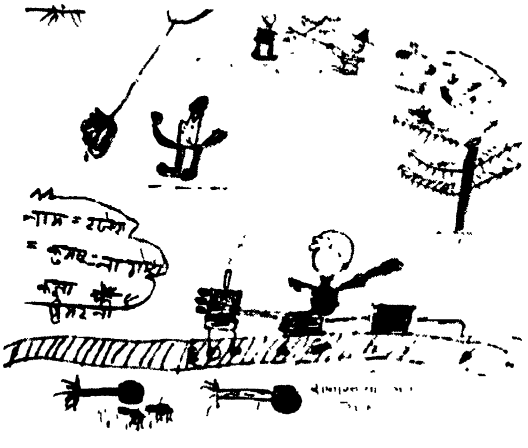

राजेश नागौरी, चौथी, राजाबरारी, टिमरनी, म.प्र.

पमेला ने पंजा मारा

क लड़की का नाम चीनू था। उसके बगल में आंटी ती थी। उनका पमेला नाम का एक कुत्ता था। नू उसके साथ खेलती। जब स्कूल से आती आंटी घर पमेला को खिलाने चली जाती। उसे पमेला त अच्छा लगता।

एक बार की बात है, जब चीनू पमेला को लाने गई तब आंटी ने कहा, "हम कहीं जा रहे दीदी घर में हैं। उनके साथ रहना।"

चीनू ने कहा, "ठीक है।"

जब आंटी चली गई तब दीदी, चीनू और ला अन्दर थे। दीदी ने कहा, "मैं बाहर के कमरे आती हूँ।"

जब दीदी आगे के कमरे में गई तब चीनू ला के कान में "कू कू कू" करके चिल्लाई। तो ला ने चीनू के आँख के बाजू में पंजा मार दिया। दी ने दवाई लगाई और पमेला को डाँटा।

थोड़ी देर बाद चीनू घर आई। जब उसके पा की नज़र उस पर गई तब चीनू के पापा ने हा, "यह काय की लगी है?"

चीनू ने कहा, "स्कूल में मैं गिर गई थी।"

थोड़ी देर बाद आंटी हमारे घर आईं। कहने गीं, "पमेला ने मारा था, ज़्यादा खरोंच तो नहीं ई।"

चीनू के पापा ने जल्दी से आंटी से पूछा, "इसे मेला ने मारा था?"

आंटी ने कहा, "हाँ। आपको चीनू ने नहीं ताया?"

पापा ने कहा, "नहीं। चीनू तो कह रही थी कि स्कूल में गिर गई थी।"

आंटी ने कहा, "डर गई होगी कि पापा डाँटेंगे।"

पापा ने मेरे को डाँटा, "तुमने झूठ क्यों बोला?"

चीनू ने कहा, "पापा मैंने झूठ इसलिए बोला क्योंकि मैं सोच रही थी कि आप डाँटोगे।"

पापा ने कहा, "चीनू अगर तुम झूठ नहीं बोलती तो थोड़ा–सा डाँटते। और तुमने झूठ बोला इसलिए हमें गुस्सा आ रहा है।"

बाद में चीनू के पापा को बड़ी भागदौड़ करनी पड़ी। बड़ी मुसीबत हुई। जब इंजेक्शन लगवाने गए तब चीनू ने अपने पापा से कहा, "पापा, नर्स बहुत तेज़ सुई लगाएगी।"

पापा ने कहा, "अच्छा हम नर्स से बोल देंगे।"

जब नर्स के पास गए पापा ने नर्स से कहा, "मेरी बच्ची कह रही है आप तेज लगाओगी।"

नर्स ने चीनू से कहा, "हमारी क्या दुश्मनी है जो तेज़ लगाएँगे।"

सुई लगवाकर घर आए तो चीनू को बहुत दर्द हुआ था। दो–तीन दिन तक चीनू स्कूल नहीं गई। तब से चीनू कुत्तों को परेशान नहीं करती।

❑ टीनू, चौथी, भोपाल, म.प्र.

नरेश तलरेजा, बारह वर्ष, हरदा, म.प्र.

पहेलियाँ

खुली रात में पैदा होती
हरी घास में सोती!
मोतियों-सी सूरत है मेरी
बादलों की है पोती!

सब लोगों का साथी सच्चा
पूरे घर की करता रक्षा
नाम है क्यों मेरा तुम बोलो
घर आओ तब मुझको खोलो

❑ दिलीप राठौड़, सातवीं, खण्डलोई, धार, म.प्र.

बहुत से बिन्दु

एक बात मैंने यह सोची
पेन में कितनी स्याही होती

लगाया बूँदों में हिसाब
पचास, सोचकर मिला जवाब

एक बार जो भर ली स्याही
बीस पन्नों की करी तबाही

एक पन्ने में लाइन बीस
लाइनवार अक्षर भी बीस

हर अक्षर में कितने बिन्दु
मुन्नी बोली ला मैं गिन दूँ

एक सौ गिनकर वह चीखी-चिन्तु
बोल, एक बूँद में कित्ते बिन्दु

बहुत से बिन्दु, बहुत से बिन्दु
ला मैं गिन दूँ, ला मैं गिन दूँ।

⌟ लाल्टू

चित्र : अनीता वैद्य

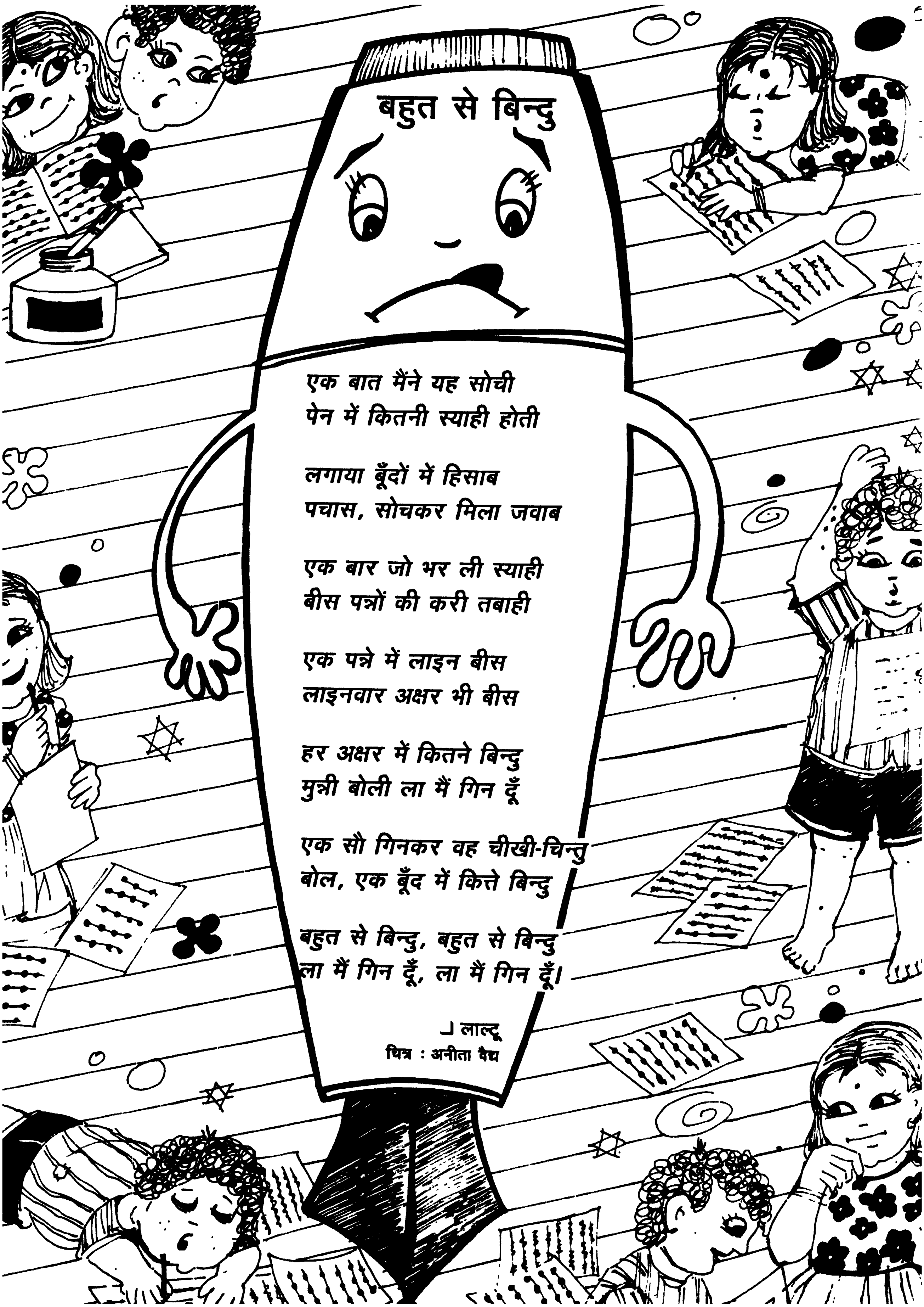

विशेष-1

पढ़ाई का बोझ

चित्र : शिवेन्द्र पांडिया

कहते हैं, दुनिया में सबसे ज़्यादा आसानी से उठाया जा सकने वाला बोझ है ज्ञान का बोझ। मनुष्य जैसे-जैसे इस बोझ को ऊपर उठाता जाता है, वह फूलों-जैसा हल्का होता चला जाता है। ज्ञान का यह बोझ मनुष्य के व्यक्तित्व को बाहर से पर्वत जैसा शक्तिशाली और भीतर से इतना विनम्र बना देता है जितनी फलों से लदी हुई पेड़ों की डालियाँ। कहते यह भी हैं कि आम वही मीठा होता है जो समय आने पर पके। समय से पहले, धूप में पके आम में न तो गंध होती है, न स्वाद। लेकिन हमारी आधुनिक शिक्षा पद्धति में सब कुछ उलट-पुलट हो गया है। यह पद्धति विद्यार्थियों को समय से पहले ही पकाने की कोशिश कर रही है। धीरे-धीरे, सहज-सरल तरीक़ों से ज्ञान के बोझ को फूलों-जैसे हल्का बनाने की बजाय बच्चों के नाजुक पीठ पर किताबो का बोझ इतना ज़्यादा लाद दिया गया है कि उनकी रीढ़ की हड्डियाँ टेढ़ी होनी लगी हैं। आँखों पर चश्मा चढ़ जाना तो बहुत मामूली और आम बात हो गई है।

ज़ाहिर है कि हालत बहुत अच्छी नहीं है। बेशक, मनुष्य की सीखने की क्षमता अपार है, किसी भी कम्प्यूटर की तुलना में कहीं बहुत ज़्यादा। लेकिन जानकारियों की संख्या जिस तेज़ी से बढ़ रही है, बस्ते का वज़न भी उतनी ही तेजी से बढ़ रहा है। होना तो यह चाहिए कि शिक्षा सरल और ज़्यादा मानवीय बने। जानकारियाँ बच्चों को मिलें ज़रूर लेकिन इस तरह से कि वे न तो उनकी पीठ पर बोझ बनें, न दिमाग पर।

जो कुछ बच्चों को स्कूल में पढ़ाया जा रहा है उसे बच्चे समझ पा रहे हैं या नहीं, जो पाठ्य सामग्री है वह उम्र के हिसाब से है या नहीं, बच्चे उसमें रुचि लेते हैं या उससे परेशान रहते हैं या उनका उससे कोई लेना देना ही नहीं रहता, इन बातों की तरफ लोगों का ध्यान जाना ज़रूरी है। साथ ही बच्चों को दी जाने वाली शिक्षा उनके मानसिक विकास में मदद करती है या सिर्फ़ उन्हें जानकारियों का पुलिन्दा बनाती है या कि उससे उनके मानसिक विकास में कमी आती है। इस बारे में सोचना भी सभी की ज़िम्मेदारी है। इस तरह की चिन्ताएँ समय-समय पर की जाती रहीं और इन्हीं चिन्ताओं के चलते अलग-अलग लोगों, समूहों ने शिक्षा में बदलाव के प्रयास भी किए। हालाँकि स्कूली शिक्षा का ढाँचा कुछ ख़ास बदला नहीं फिर भी कोशिशें होती रही हैं और अभी भी जारी हैं।

एकलव्य (यानी 'चकमक' को प्रकाशित करने वाली संस्था) का होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम इसी तरह की एक कोशिश है। इस कार्यक्रम के ज़रिए न सिर्फ़ विज्ञान शिक्षण के तरीक़े में बदलाव किया गया बल्कि पूरी शिक्षा व्यवस्था को समाज से जोड़ने का प्रयास भी किया गया। इसमें विद्यार्थियों और शिक्षकों को शिक्षा की प्रक्रिया में सक्रिय

चित्र : शिवेन्द्र पांडिया

भागीदार बनाया गया और साथ ही शिक्षा के कई और पहलुओं पर भी ध्यान दिया गया। मसलन अपने आसपास की दुनिया को समझने की ललक और योग्यता, दिमाग़ का खुलापन, अपनी बात कह पाने की क्षमता, हाथों का हुनर आदि। एक ऐसे पाठ्यक्रम को विकसित करने की कोशिश की गई जिसमें शिक्षा के इन विभिन्न पहलुओं को समोया जा सके। यह कोशिश एक लगातार चलने वाली प्रक्रिया है, जिसमें इसे और बेहतर बनाने के लिए समय–समय पर बदलाव भी आते रहे हैं। फ़िलहाल, होशंगाबाद विज्ञान शिक्षण कार्यक्रम मध्यप्रदेश के चौदह ज़िलों के लगभग 450 स्कूलों में चल रहा है और इसके नतीजे काफ़ी उत्साह बढ़ाने वाले हैं।

एकलव्य के इस शैक्षिक नवाचार कार्यक्रम में उन्हीं बातों को उभारा गया है जिन्हें गिजुभाई से लेकर आधुनिक शिक्षाविदों तक, कई लोग कहते और अपनाते रहे हैं। लेकिन शिक्षा के क्षेत्र में इतना सोच–विचार होने और निजी स्तर पर सार्थक काम होते रहने के बावजूद बच्चों पर पढ़ाई का बोझ लगातार बढ़ता ही गया है। सीखने की प्रक्रिया नीरस बनती जा रही है, खासकर छोटी कक्षाओं में।

समय–समय पर शिक्षा से सम्बंधित ने भी इन सब बातों पर विस्तार से विचार किया है। लेकिन स्थिति कहीं अधिक बिगड़ गई है। अंततः मार्च, 1992 में भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय (शिक्षा मंत्रालय) ने एक राष्ट्रीय सलाहकार समिति बनाई। इस समिति में देश भर के आठ शिक्षाविदों को शामिल किया गया। समिति के अध्यक्ष बनाए गए प्रोफ़ेसर यशपाल। समिति को इस बात पर विचार करना था, 'कि शिक्षा के सभी स्तरों पर विद्यार्थियों, विशेषकर छोटी कक्षा के विद्यार्थियों पर पढ़ाई के दौरान पड़ने वाले बोझ को कैसे कम किया जाए। साथ ही साथ शिक्षा की गुणवत्ता में कैसे सुधार लाया जाए।'

समिति ने देश भर में नवाचारों में लगे स्वैच्छिक संगठनों, पाठ्यक्रम बनाने वालों, पाठ्यक्रम लिखने वालों, निजी प्रकाशकों आदि से बातचीत की। भोपाल में एकलव्य संस्था के साथ भी समिति ने ऐसी ही एक बैठक की। इसके अतिरिक्त अभिभावकों, शिक्षकों, विद्यार्थियों तथा शिक्षा में रुचि रखने वाले अन्य व्यक्तियों से विभिन्न माध्यमों से संपर्क किया गया।

ऐसे भी बढ़ता है बस्ते का बोझ

निजी स्कूलों के बच्चों को सरकारी स्कूल के बच्चों की तुलना में अक्सर दोगुने से भी ज़्यादा वज़न का बस्ता लादना पड़ता है। इसमें ज़रूरी किताबों की बजाय ग़ैरज़रूरी किताबों की संख्या ही अधिक होती है। मिसाल के लिए, आठवीं कक्षा तक चलने वाली सुलेख की किताबें। इन ग़ैरज़रूरी किताबों की कीमतें भी ज़रूरी किताबों की तुलना में बहुत ज़्यादा होती हैं। लेकिन हर विद्यार्थी को ये सभी किताबें ख़रीदनी पड़ती हैं।

होता यह है कि प्रायवेट स्कूलों में चलने वाली ज़्यादातर किताबें निजी प्रकाशक छापते हैं। मान लो किसी किताब की लागत 3 रुपए है तो प्रकाशक उसे पुस्तक विक्रेता को 6 रुपए में देगा। पुस्तक विक्रेता, निजी स्कूलों के पाठ्यक्रम में उस किताब को शामिल करवा लेगा और इसके बदले स्कूल के विद्यार्थियों की कुल संख्या के हिसाब से स्कूल एक प्रति पर 3 रुपए कमीशन लेगा। यानी यह किताब पुस्तक विक्रेता को कुल 9 रुपए में पड़ी। लेकिन विद्यार्थी को यही किताब 15 से 20 रुपए तक में मिलेगी। अब पाठ्यक्रम में जितनी ज़्यादा किताबें होंगी प्रकाशक, पुस्तक विक्रेता और स्कूल चलाने वालों को उतना ही ज़्यादा मुनाफ़ा होगा। ज़ाहिर है, इन तीनों में से कोई भी बच्चे के बस्ते के वज़न की परवाह करेगा तो उसका अपना धन्धा चौपट हो जाएगा

प्राप्त मत, विचार, सुझाव आदि के आधार पर समिति ने जुलाई, 1993 में सरकार को अपनी रिपोर्ट सौंप दी। समिति ने शिक्षा की इन मुश्किलों की जाँच–परख करते हुए लिखा कि, 'बच्चों के लिए स्कूली बस्ते के बोझ से ज़्यादा बुरा है न समझ पाने का बोझ।' स्कूलों के आज के माहौल और मुश्किलों का बड़े पैमाने पर विश्लेषण करते हुए 'यशपाल समिति' ने महत्वपूर्ण सिफ़ारिशें दी हैं। फिलहाल तो संतोष की बात यह है कि सरकार ने न केवल इन्हें स्वीकार कर लिया है, बल्कि लागू करने की इच्छा भी ज़ाहिर की है। इन सिफ़ारिशों का सार हम इसी अंक में दे रहे हैं।

यशपाल समिति की सिफ़ारिशें

1. निजी सफलता को पुरस्कृत करने वाली प्रतियोगिताओं को बढ़ावा नहीं दिया जाना चाहिए। क्योंकि ये बच्चों को आनन्ददायक शिक्षा प्राप्ति से दूर रखती हैं। स्कूलों में सहयोगशील शिक्षा प्राप्ति को बढ़ावा देने के उद्देश्य से सामूहिक गतिविधियाँ और सामूहिक सफलता को प्रोत्साहित और पुरस्कृत करना चाहिए।

2. पाठ्यक्रम बनाने और पाठ्यपुस्तक लेखन के काम को विकेन्द्रित किया जाना चाहिए, जिससे इनमें शिक्षकों की भागीदारी बढ़ सके। अधिक स्वायत्तता और स्थानीय ज़रूरतों के हिसाब से शैक्षिक सामग्री विकसित करने के अवसर दिए जाएँ। सभी स्कूलों को पाठ्यपुस्तकों और अन्य सामग्री के चुनाव सहित नवाचार के लिए बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

शिक्षा के क्षेत्र में काम करने वाली स्वयंसेवी संस्थाओं को पाठ्यक्रम के विकास और शिक्षक प्रशिक्षण के काम में सहायता और स्वतंत्रता दी जानी चाहिए। साथ ही इस तरह की संस्थाओं के शैक्षिक नवाचार के अनुभवों के प्रचार–प्रसार की एक सही रूप–रेखा तैयार की जानी चाहिए।

जिला, ब्लाक व गाँव के स्तर पर ऐसी समितियाँ बनाई जाएँ जो अपने–अपने क्षेत्र के स्कूलों के लिए योजना बनाने और स्कूलों की देख–रेख का काम कर सकें।

स्कूल के जरूरी सामान ख़रीदने और बदलने के लिए आकस्मिक निधि की व्यवस्था की जानी चाहिए। यह धन स्कूल के वेतन बिल का दस प्रतिशत हो।

3. पाठ्यपुस्तकों को बनाने में वैज्ञानिकों और विशेषज्ञों को सलाहकार के रूप में लिया जाना चाहिए, पुस्तक लेखकों के रूप में नहीं। पुस्तक लिखने के काम में शिक्षकों को बड़ी संख्या में जोड़ा जाए और उन्हें इस काम का प्रशिक्षण भी दिया जाना चाहिए

विभिन्न राज्यों में इस समय पाठ्यक्रम, पाठ्यपुस्तक तथा परीक्षा की तीन समानान्तर प्रणालियाँ चल रही हैं। हर प्रदेश में ज़्यादातर स्कूल राज्य शिक्षा मण्डल से सम्बंधित हैं। जबकि कुछ स्कूल केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मण्डल से तो कुछ इन्डियन काउंसिल ऑफ़ सेकेण्डरी एजुकेशन से सम्बन्धित हैं। दिल्ली के अलावा दूसरे राज्यों में जो स्कूल केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मण्डल से सम्बन्धित हैं उन्हें अव्वल दर्जे का माना जाता है। इस वजह से केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मण्डल का पाठ्यक्रम (जो काफ़ी भारी माना जाता है) राज्यों के शिक्षा मण्डलों के लिए मार्गदर्शक बन जाताहै। नतीजा यह है राज्य के बच्चों के लिए भारी पाठ्यक्रम बन जाता है। अत: यह समिति सिफ़ारिश करती है कि केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा मण्डल का अधिकार क्षेत्र केवल केन्द्रीय और नवोदय विद्यालयों तक ही सीमित रहे और दूसरे सभी स्कूल अपने राज्य मण्डलों से सम्बन्धित रहें।

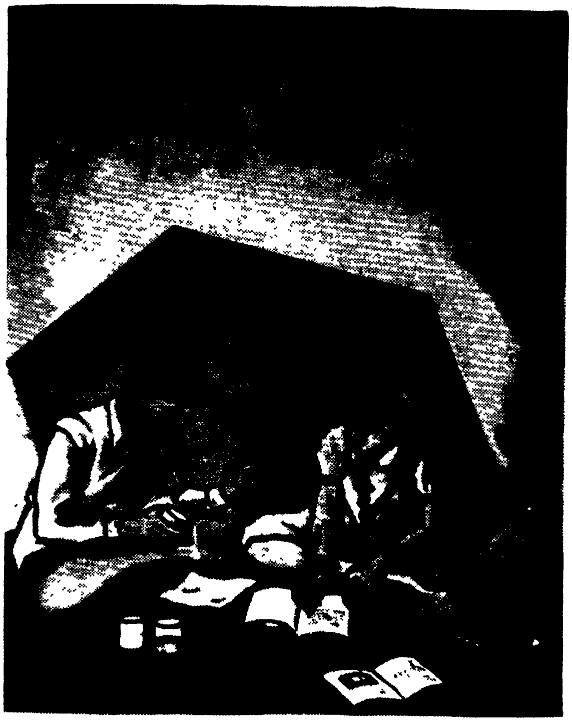

5. बहुत छोटे बच्चों के स्कूलों के लिए उचित व्यवस्था की जानी चाहिए। जगह, स्टाफ, पढ़ाई और खेल के सामान के मानदण्ड तय हों। यह बात भी तय होनी चाहिए कि ये स्कूल पढ़ने, लिखने व गिनने की औपचारिक पढ़ाई के रूप में बच्चों पर शिक्षा का ज़्यादा बोझ न डालें। नर्सरी कक्षाओं में दाखिले के लिए होने वाले टेस्ट या इन्टरव्यू बन्द होने चाहिए।

    ग़ैर–सरकारी स्कूलों को मान्यता देने वाले मानदण्ड ज़्यादा कड़े होने चाहिए और ये मानदण्ड सरकारी स्कूलों पर भी लागू किए जाने चाहिए। ताकि शिक्षा के स्तर में सुधार हो और वह सिर्फ़ पैसे कमाने का धन्धा न बन जाए।

6. पाठ्यपुस्तकों को स्कूल की सम्पत्ति माना जाए ताकि बच्चों को पुस्तकें ख़रीदने और उन्हें रोज़ रोज़ लादकर स्कूल लाने ले जाने से मुक्ति मिले। टाइम टेबिल इसी हिसाब से बनाया जाए कि यह सम्भव हो सके।

7. प्राथमिक कक्षाओं में बच्चों को गृहकार्य सिर्फ़ इतना और ऐसा दिया जाना चाहिए कि वे अपने घर के मौहाल में नई बातें खोजें और उन्हीं बातों को विस्तार से समझें। माध्यमिक या उससे ऊपर वाली कक्षाओं में भी गृहकार्य जहाँ ज़रूरी हो वहाँ भी पाठ्यपुस्तक से नहीं हो। लेकिन जब भी छात्रों को पुस्तकों की ज़रूरत हो बारी–बारी से उन्हें उपलब्ध कराई जाए।

8. वर्तमान में शिक्षक–छात्र अनुपात (1:40) का मानदण्ड लागू किया जाए और भविष्य में कम से कम प्राथमिक कक्षाओं में इसे 1:30 तक किया जाए।

9. बच्चों को ध्यान में रखते हुए इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के ज़रिए सामाजिक आचरण/ चाल चलन बनाने के ज़्यादा से ज़्यादा प्रयास किए जाएँ।

10. शिक्षकों के लिए बी.एड. में ही नर्सरी प्राथमिक या माध्यमिक शिक्षा में विशेषता हासिल करने की सम्भावनाएँ रहनी चाहिए। शिक्षकों के लिए तय किए गए पाठ्यक्रम में इस तरह बदलाव किए जाने चाहिए कि वे स्कूली शिक्षा की बदलती हुई ज़रूरतों के लिए उपयोगी हो सकें। इस पाठ्यक्रम में ख़ुद से सीखने और स्वतंत्र चिंतन करने पर ज़ोर दिया जाए। पत्राचार के

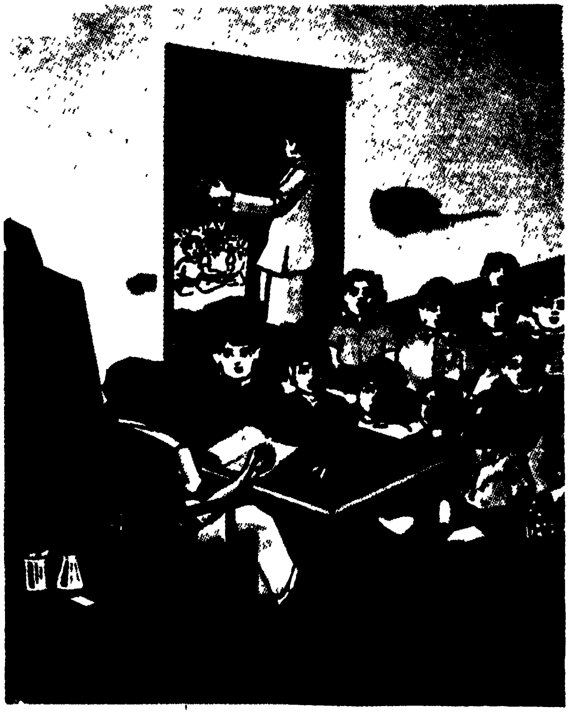

द्वारा बी.एड. की उपाधि देने वाले पाठ्यक्रमों की मान्यता समाप्त कर देनी चाहिए।

शिक्षकों के लिए भी लगातार शिक्षा प्राप्त करते रहने को लागू करना चाहिए। शिक्षकों को उनके काम के दौरान प्रशिक्षण देने के लिए ऐसे कार्यक्रम बनाए जाएँ जो व्यवस्थित तरीके से कल्पनाशीलता के साथ तैयार किए गए हों।

11. कक्षा दस और बारह के अन्त में होने वाली परीक्षाओं की जाँच-पड़ताल करके तय किया जाना चाहिए कि परीक्षा में पाठ्यपुस्तकों पर आधारित तथा क्विज़ टाइप सवालों को अवधारणा पर आधारित प्रश्नो में कैसे बदला जाए। इससे रटने की मजबूरी से छुटकारा मिलेगा।

12. सभी कक्षाओ के पाठ्यक्रमों की जाँच के लिए एक दल और उसके कई छोटे दल बनाए जाएँ। ये छोटे दल निर्णय लें कि :

(क) कम से कम कितने पाठ पढ़ाए जाएँ।

(ख) प्रत्येक पाठ में कम से कम कितनी जानकारियाँ या अवधारणाएँ हो।

(ग) प्रत्येक जानकारी को आराम से पढ़ाने में शिक्षक को मिलने वाला समय कितना हो।

गणित के पाठ्यक्रम में जाँच के बाद उचित बदलाव किए जाएँ। गणित की मूल अवधारणाओं को पढ़ाने की गति धीमी की जाए। साथ ही अंक गणित में स्थान व आकार सम्बन्धी समस्याएँ हल करना जोड़ा जाए ताकि प्राथमिक गणित के कार्य क्षेत्र को फैलाया जा सके। इससे आगे के पाठ्यक्रम व पाठ्य सामग्री में गणितीय कौशल को तेज़ करने के लिए यांत्रिक नियमों को रटवाने के बजाय समझ और बुद्धि के उपयोग को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

भाषा की पुस्तकों में बोलचाल की भाषा, मुहावरे और बच्चों के जीवन में अनुभव, साधारण लोगों के जीवन से जुड़ी कहानियाँ हों। किताबों में पंडिताऊ भाषा और उपदेश नहीं होने चाहिए।

प्राथमिक से लेकर उच्चतर तक सभी कक्षाओं में विज्ञान के पाठ्यक्रम में प्रयोग करने के अवसर मिलें और ज़्यादा से ज़्यादा विषय, बच्चों और शिक्षकों द्वारा की जाने वाली गतिविधियों के माध्यम से बताए जाएँ।

स्वास्थ्य और स्वच्छता पर उपदेश देने की जगह जीवन की वास्तविक परिस्थितियों के सम्बन्ध में सोच-विचार करने पर बल दिया जाना चाहिए।

इतिहास, भूगोल और सामाजिक विज्ञानो के पाठ्यक्रमो मे बदलाव भी किया जाए जिससे कि बच्चे सामाजिक, आर्थिक समस्याओं को समझ सकें और उस पर विचार कर सकें। नागरिक शास्त्र और भूगोल को जिस तरीक़े से आजकल पढ़ाया जाता है, वह बच्चों को रटने को बाध्य करता है। अत: उसकी जगह समकालीन अध्ययन शुरू किया जाना चाहिए। जिससे बच्चे अपने समय की वास्तविकता को समझ सकें।

प्रस्तुति : कविता सुरेश

(चित्र : 'विज्ञान क्या है' से)

कंगारू

ऑस्ट्रेलिया और कंगारू दोनों ऐसे नाम हैं कि एक को याद करो तो दूसरा खुद–ब–खुद याद आ जाता है। कंगारू के बारे में यह बात भी जानी मानी है कि मादा कंगारू के पेट पर एक थैली होती है जिसमें वह अपने बच्चे को रखती है। ख़ैर इतना सब बतियाने के पीछे असली बात यह है कि इसी तरह के कंगारू हम इस बार बनाएँ तो कैसा रहेगा?

ठीक रहेगा न, तो पहले थोड़ा मोटा कागज़, थोड़ा उससे पतला कागज़, पेंसिल, पेन, कैंची, गोंद इकट्ठे कर लो।

सबसे पहले इस चित्र में दिखाए गए आकार को कागज़ पर उतार लो। कंगारू माँ का आकार मोटे कागज़ पर, बच्चे का उससे थोड़े पतले कागज़ पर और दिल के आकार वाली थैली किसी डिजाइन वाले कागज़ पर उतारकर काट लो। आकार काट लेने के बाद चित्र की ही तरह उन पर आँख–कान पेन से बना लो।

बस अब पेट की थैली को दाएँ और बाँए ओर गोंद लगाकर कंगारू माँ के पेट पर चिपका लो।

अब एक काम और करो। कंगारू माँ के आकार को सबसे पहले चित्र में टूटी रेखा वाली जगहों से मोड़ लो। ऐसा करने से कंगारू माँ खड़ी हो सकेगी।

बस अब बच्चे को माँ की थैली में बैठा दो। इसी तरह से और भी कंगारू बनाकर अपने खेल में शामिल कर सकते हो या चाहो तो कंगारू की पीठ पर अपने दोस्त का नाम लिखकर उसके जन्मदिन पर भेंट कर सकते हो।

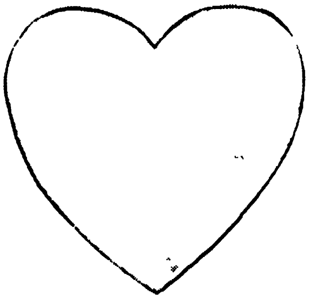

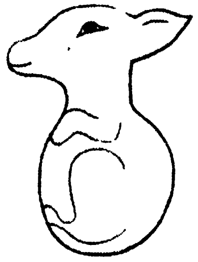

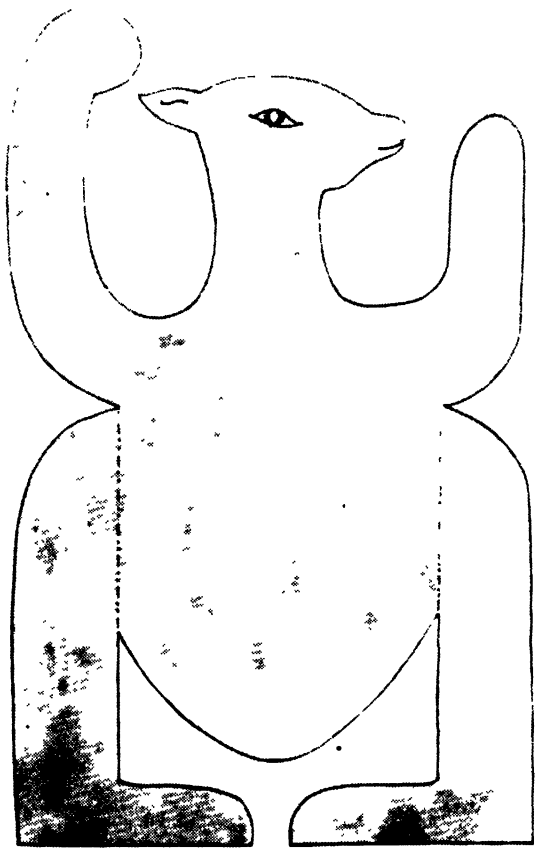

क़िस्सा आफ़न्ती का

चित्र : शिवेन्द्र पांडिया

हूं!
आँखें खोलो उनमें दवा डालनी है।
ये कैसा इलाज!
दर्द पेट में है और दवा आँख में डाल रहे हो।
भले आदमी, अगर तुम्हें आँख से ठीक से दिखाई देता तो क्या तुम फ़फूंद लगी रोटी खाते?

तोत्तोचान

5 सितम्बर यानी शिक्षक दिवस। स्व. डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन –जो मूलतः एक शिक्षक थे और बाद में हमारे देश के राष्ट्रपति भी बने– के जन्मदिन पर मनाया जाता है यह शिक्षकों का दिन। और जब शिक्षकों और उनके इस दिन की बात चलती है तो ज़ाहिर है वह बच्चों और पढ़ाई–लिखाई, पढ़ाने के तरीक़ों आदि से अछूती नहीं रह सकती।

बचपन के शुरुआती कुछ सालों के बाद अधिकांश बच्चों का अधिकतर समय तो स्कूल में ही गुज़रता है, है न। तो यह तय है कि तुम पर तुम्हारे शिक्षकों का, उनके व्यवहार, पढ़ाने के तरीक़े, बातचीत के तरीक़े आदि का असर तो पड़ता ही है। अगर गुरुजी या मैडम तुमसे दोस्ताना अंदाज़ में बात करें; पढ़ाई को थोड़ा चटपटा, कुछ रोचक बना डालने की कोशिश करें, सवाल नहीं बनने पर एकदम नाराज़ न हों बल्कि समझने–समझाने की कोशिश करें कि ऐसा क्यों हुआ.... तो पढ़ने में मज़ा आएगा न? पर शिक्षक दिवस पर शायद हमें सिर्फ़ शिक्षकों से हमारी अपेक्षाएँ ही नहीं गिनानी चाहिए। यह भी सोचना चाहिए कि मौजूदा हालात में क्या इतने प्यार–से, इतने इत्मीनान–से पढ़ाने के मौक़े, सुविधाएँ शिक्षकों को मिल भी पाते हैं? वे ऐसा करना चाहें, करने की कोशिश भी करें, तो उन्हें कैसी–कैसी समस्याओं से जूझना पड़ता होगा?

बहरहाल, शिक्षक दिवस के सन्दर्भ में इस बार हम एक जापानी लेखिका तोत्तोचान (या तेत्सुको कुरोयाँगी) के अपने बचपन के स्कूल तोमोए की कहानी के कुछ अंश यहाँ दे रहे हैं। तोत्तोचान एक सात साल की नन्हीं बच्ची है जो तुम्हारी तरह ही अपनी उम्र के मुताबिक चंचल, चपल और सवालों और उधमों से भरी हुई है। पर जापानी समाज के अनुशासित स्कूल उसके तमाम सवालों और उधमों को बर्दाश्त नहीं कर पाते हैं और उसे स्कूल से निकाल देते हैं। फिर तोत्तोचान की माँ उसके लिए आम स्कूलों से बहुत अलग एक स्कूल ढूँढ निकालती है– तोमोए गाकुएन।

तोमोए गाकुएन में जाकर पहले दिन ही तोत्तोचान यह पाती है कि वह स्कूल उसे अच्छा लगा। क्यों और कैसे, यह तो जब तुम आगे पढ़ोगे तो पता चल ही जाएगा।

रेलगाड़ी के डिब्बों में शान्ति थी। दिन की पहली कक्षा शुरू हो चुकी थी। स्कूल के चारों ओर दीवार नहीं थी, बदले में थे पेड़। बाग़ की क्यारियाँ लाल पीले फूलों से पटी हुई थीं।

हेडमास्टर साहब का दफ़्तर रेलगाड़ी के डिब्बे में नहीं था। वह था दाहिने हाथ की ओर एक-मंज़िले भवन में। वहाँ पहुँचने के लिए सात अर्ध-गोलाकार सीढ़ियाँ चढ़नी होती थीं।

तोत्तोचान माँ से अपना हाथ छुड़ा भागकर सीढ़ियाँ चढ़ने लगी। अचानक वह रुकी और मुड़ी। इतने अचानक कि माँ उससे टकराने ही वाली थी।

''क्या हुआ?'' माँ ने पूछा।

सबसे ऊपरी सीढ़ी पर खड़ी तोत्तोचान गम्भीरता से फुसफुसाई, ''जिनसे हम मिलने जा रहे हैं वे ज़रूर स्टेशन मास्टर होंगे।''

माँ धीरज वाली थी। हँसना भी उसे आता था। वह झुकी, अपना चेहरा तोत्तोचान के चेहरे के पास ले गई और वह भी फुसफुसाई, ''क्यों?''

तोत्तोचान ने धीरे से कहा, ''तुमने कहा था कि वे हेडमास्टर हैं। पर अगर वे इन सारे रेलगाड़ी के डिब्बों के मालिक हैं तो वे स्टेशन मास्टर हुए ना।''

माँ को मानना पड़ रहा था कि रेलगाड़ी के डिब्बों में स्कूल चलना कुछ अनूठी बात थी पर फ़िलहाल समझाने का और वक्त न था। माँ ने सिर्फ इतना ही कहा, ''तुम उनसे ही क्यों नहीं पूछ लेतीं। पर तुम अपने डैडी के बारे में क्या सोचती हो, उनके पास भी तो ढेरों वायलिन हैं। पर इससे अपना घर वायलिन की दुकान तो नहीं बन जाता?''

''हाँ, दुकान तो नहीं बनता अपना घर।'' तोत्तोचान ने माँ का हाथ थामते हुए सहमति जताई।

हेडमास्टर साहब

जब माँ और तोत्तोचान दफ़्तर में घुसे तो कुर्सी पर बैठे सज्जन उठ खड़े हुए।

उनके सिर पर बाल कम हो चले थे। कुछ दाँत भी ग़ायब थे। पर चेहरा उनका स्वस्थ लगता था। बहुत लम्बे भी नहीं थे वे सज्जन, पर उनके कँधे व बाँहें मज़बूत ही लगते थे। उन्होंने काले रंग का एक घिसा पुराना-सा सूट पहन रखा था।

जल्दी से झुककर तोत्तोचान ने नमस्कार की रस्म पूरी की और उत्साह से पूछा, ''आप स्कूल मास्टर हैं या स्टेशन मास्टर?''

माँ अकुलाई। पर इसके पहले कि वह कुछ सफ़ाई देती सज्जन हँस पड़े और बोले, ''मैं इस स्कूल का हेडमास्टर हूँ।''

तोत्तोचान की खुशी का ठिकाना न रहा। "मुझे बड़ी खुशी हुई" उसने कहा, "क्योंकि मैं अब आपसे कुछ माँगना चाहती हूँ। मैं आपके स्कूल में पढ़ना चाहती हूँ।"

हेडमास्टर साहब ने तोत्तोचान को कुर्सी पर बैठने को कहा। फिर माँ की ओर मुड़कर वे बोले, "आप घर जा सकती हैं। मैं तोत्तोचान से बात करना चाहता हूँ।"

तोत्तोचान को थोड़ी-सी उलझन हुई। पर उसने सोचकर देखा तो लगा कि सामने खड़े सज्जन से बात करना उसे बुरा नहीं लगेगा।

"तो मैं इसे आपके पास छोड़े जा रही हूँ।" माँ ने भी बड़ी बहादुरी के साथ कहा। दफ़्तर से निकलती हुई वह दरवाज़ा बन्द करती गई।

हेडमास्टर साहब ने एक कुर्सी खींची और तोत्तोचान की कुर्सी के सामने रखी। जब दोनों आमने-सामने बैठ गए तो उन्होंने कहा, "अब तुम मुझे अपने बारे में सब कुछ बताओ। कुछ भी, जो भी तुम बताना चाहो, बताओ।"

"जो मुझे अच्छा लगे वह बताऊँ?" तोत्तोचान ने सोचा था कि वे प्रश्न करेंगे और उसे उत्तर देने होंगे। पर जब उससे यह कहा गया कि वह किसी भी चीज़ के बारे में बोल सकती है तो उसे बड़ा अच्छा लगा। वह तुरन्त बोलने लगी। उसने जो कुछ कहा वह था तो काफ़ी गड्ड-मड्ड। पर वह अपनी पूरी ताक़त से बोलती गई। उसने हेडमास्टर साहब को बताया कि जिस ट्रेन पर चढ़कर वे आए थे वह कितनी तेज़ चली थी, उसने बताया कि उसने टिकट-बाबू से कहा था कि वे उससे टिकट न लें पर उन्होंने उसकी बात ही न मानी; उसने बताया कि उसके पिछले स्कूल की शिक्षिका कितनी सुन्दर थी; गोरैया का घोंसला कैसा था; उसका भूरा कुत्ता रॉकी कैसे-कैसे करिश्में दिखा सकता था; उसने बताया कि वह कैंची मुँह में डालकर चलाया करती थी पर उसकी शिक्षिका ने उसे ऐसा करने से मना किया था, क्योंकि उन्हें डर था कि कहीं तोत्तोचान की जीभ न कट जाए, पर वह फिर भी वैसा करती रही; उसने बताया कि वह नाक कैसे सिनक लेती थी

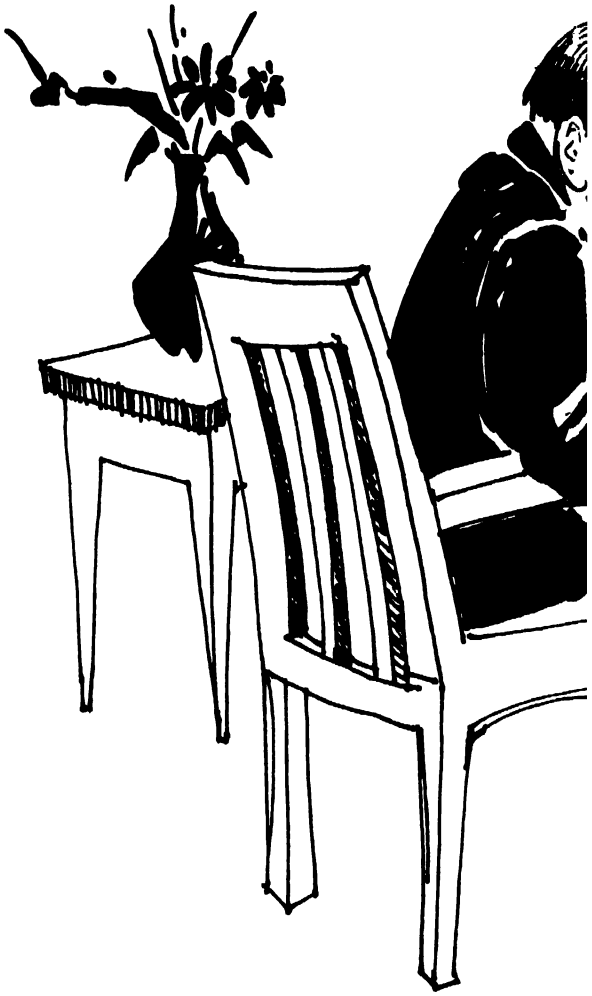

क्योंकि उसकी बहती नाक अगर माँ देख लेती तो वह उसे डाँट लगाती थी; उसने बताया कि पापा कितने अच्छे तैराक थे, और तो और वे गोता भी लगा सकते थे। वह लगातार बोलती गई। हेडमास्टर साहब कभी हँसते, कभी गर्दन हिलाते और कहते, "और फिर"। तोत्तोचान इतनी ख़ुश थी कि वह आगे बोलती जाती। बोलते-बोलते आख़िरकार उसके पास बोलने को कुछ भी नहीं बचा। अब उसका मुँह बन्द था, पर वह अपने दिमाग़ पर ज़ोर लगा रही थी। सोच रही थी कि आगे क्या कहे?

"मुझे और कुछ बताने को तुम्हारे पास क्या कुछ भी नहीं है?" हेडमास्टर साहब ने पूछा।

ऐसे में चुप रहना कितना बुरा होगा। तोत्तोचान ने सोचा। कितना अच्छा मौक़ा है यह। क्या वह किसी भी चीज़ के बारे में और कुछ भी नहीं बता सकती? उसने मन ही मन सोचा। अचानक उसे कुछ सूझा।

हाँ, वह अपने फ्रॉक के बारे में बताएगी जो

उसने पहन रखा था। वैसे उसके ज़्यादातर कपड़े माँ ख़ुद ही सीती थी, पर यह फ्रॉक तो दुकान से ख़रीदा हुआ था। जब भी वह दोपहर स्कूल से घर लौटती थी तो अक़्सर उसके कपड़े फटे होते थे। माँ को समझ ही न आता कि वे ऐसे कैसे फटे होंगे। उसकी सुन्दर सफ़ेद सूती चड्डियाँ भी कभी–कभी तार–तार हो जाती थीं। उसने हेडमास्टर को बताया कि ऐसा कैसे हो जाता था। असल में उसके कपड़े फटते इसलिए थे क्योंकि वह दूसरों के बागों में झाड़ियों के बीच में से घुसती थी। कभी–कभी, वह खाली ज़मीन के चारों ओर लगे कँटीले तारों के नीचे से भी घुसना पसन्द करती थी। इसलिए उस दिन सुबह जब तैयार होने की बारी आई तो माँ की सिली हुई सारी अच्छी फ्रॉक फटी निकलीं और उसे यह ख़रीदी हुई फ्रॉक पहननी पड़ी। फ्रॉक लाल और सलेटी रंग की चौकड़ियों की बनी थी, कपड़ा था जर्सी का, इतना बुरा भी नहीं था, पर माँ को लगता था कि कॉलर पर कढ़े लाल फूल फूहड़ हैं। माँ को कॉलर पसन्द नहीं हैं, तोत्तोचान ने कॉलर उठाकर हेडमास्टर साहब को दिखाया।

पर इसके बाद खूब सोचने पर भी तोत्तोचान को कुछ और न सूझा। उसे इस बात से कुछ दुख हुआ। पर इतने में ही हेडमास्टर साहब उठ खड़े हुए। उन्होंने अपना बड़ा और कुछ गर्म–सा हाथ उसके सिर पर रखा और कहा, "अब तुम इस स्कूल की छात्रा हो।"

ठीक ये ही शब्द थे उनके। और उस समय तोत्तोचान को लगा मानो वह पहली बार किसी ऐसे व्यक्ति से मिली हो जो उसे सच में अच्छा लगता हो। असल में इससे पहले किसी ने उसे इतनी देर बोलते नहीं सुना था। और तो और उसे सुनते समय हेडमास्टर साहब ने एक बार भी जम्हाई नहीं ली थी, न ही अरुचि का भाव उनके चेहरे पर आया था। शुरू से अन्त तक उन्हें सुनना उतना ही अच्छा लगा था जितना उसे बोलना।

तोत्तोचान को तब समय देखना नहीं आता था। फिर भी उसे लगा मानो काफ़ी समय बीत चुका हो। अगर उसे समय देखना आता होता तो उसे ज़रूर और भी ज़्यादा आश्चर्य होता। और शायद तब वह हेडमास्टर साहब के प्रति और भी कृतज्ञ होती। क्योंकि, माँ और तोत्तोचान सुबह आठ बजे स्कूल पहुँचे थे और जब वह बोलना बन्द कर चुकी और हेडमास्टर ने उसे बताया कि वह अब स्कूल की छात्रा है, तब उन्होंने अपनी जेब से घड़ी निकाली और कहा, अरे खाना खाने का समय हो गया। यानी हेडमास्टर साहब ने उसका बतियाना पूरे चार घण्टे सुना होगा।

इस दिन से पहले या उसके बाद किसी वयस्क ने तोत्तोचान की बात इतने लम्बे समय तक नहीं सुनी। और सच तो यह है कि उसकी माँ और पिछली शिक्षिका को यह जानकर भी आश्चर्य होता कि एक सात साल की लड़की लगातार चार घण्टे बोलने का मसाला भी जुटा सकती है। उस वक़्त तोत्तोचान को यह तो पता था ही नहीं कि उसे स्कूल से निकाल दिया गया है और लोगों को यह समझ ही नहीं आ रहा है कि उसका किया क्या जाए। उसकी

स्वाभाविक ख़ुशमिज़ाजी और भुलक्कड़पन के कारण वह भोली-भाली लगती थी। पर अन्दर ही अन्दर उसे यह तो लगता ही था कि उसे दूसरे बच्चों से कुछ फ़र्क समझा जाता है, शायद कुछ अजीब भी। पर हेडमास्टर साहब के सामने वह अपने आप को सुरक्षित महसूस कर रही थी। वह बहुत खुश थी। वह हमेशा-हमेशा के लिए उनके ही साथ रहना चाहती थी।

ये भावनाएँ थीं तोत्तोचान की उस पहले दिन हेडमास्टर सोसाकु कोबायाशी के बारे में। संयोग से हेडमास्टर साहब की भावनाएँ भी उसके प्रति ठीक ऐसी ही थीं।

सबसे ख़राब कपड़े

हेडमास्टर साहब बच्चो के माता-पिता से बराबर यह कहा करते थे कि वे बच्चो को स्कूल में सबसे ख़राब कपड़े पहनाकर भेजें। ऐसा वे इसलिए कहते ताकि बच्चे खेलते समय कपड़ों को कीचड़-कादे में सान डालें या फाड़ डालें तो किसी को कोई तकलीफ़ न हो। उन्हें लगता था कि बच्चों को कपड़े गन्दे करने या फाड़ने के लिए डाँटना या डाँट के डर से बच्चों का खेलों में हिस्सा न लेना शर्मनाक बाते थीं। तोमोए के पास ही दूसरी प्राथमिक शालाएँ भी थीं। जहाँ बच्चियाँ नौसेना की पोशाक जैसी यूनीफॉर्म पहनतीं और लड़के पहनते ऊँची कॉलर के जैकेट और हाफ पैन्ट। तोमोए के बच्चे अपने साधारण कपड़े पहनते और उनके शिक्षक उनके कपड़ों की चिन्ता किए बिना उन्हें जी भरकर खेलने देते। आज की तरह उन दिनों जीन्स की पैन्ट तो बनती न थी। सो सभी लड़कों की पैन्टों पर थेगलियाँ लगी होती थीं। लड़कियों की स्कर्ट भी सबसे टिकाऊ कपड़े की बनी होती थीं।

तोत्तोचान का मनपसन्द खेल था लोगों के बगीचों की बाड़ों के नीचे से सरकना। इसलिए उसके लिए तो कपड़ों की चिन्ता न करना ही सुख की बात थी। उन दिनों बाड़ें कँटीले तारों के बने होते थे। कइयों में तो कँटीले तार बिल्कुल ज़मीन तक लगे होते थे। उनके नीचे से निकलने के लिए बिल्कुल किसी कुत्ते की तरह ज़मीन खोदनी पड़ती थी। सावधानी बरतने के बावजूद तोत्तोचान के कपड़े कँटीले तारों में उलझकर फट ही जाते थे।

एक बार तो उसकी मलमल की एक फ्रॉक ऊपर से नीचे तक तार-तार हो गई थी। फ्रॉक थी तो पुरानी, पर उसे पता था कि माँ को वह बेहद पसन्द है। तोत्तोचान बार-बार सोचती रही कि माँ से आख़िर क्या कहे? यह बताने की उसकी बिल्कुल भी इच्छा न थी कि फ्रॉक असल में कँटीले तारों में उलझकर फटी है। उसने सोचा कि कोई झूठ बोलना ही बेहतर होगा। ताकि माँ को लगे कि फ्रॉक के फटने में उसका कोई दोष न था। उसने तब माँ को कुछ ऐसी कहानी सुनाई :

'मैं जब सड़क के पास से जा रही थी अचानक बहुत से बच्चों ने मुझ पर छुरे फेंके। मैं उन्हें पहचानती तक नहीं। इसलिए ही यह फ्रॉक ऐसे फट गई।'' पर कहानी सुनाते समय वह बराबर यह सोच रही थी कि अगर माँ ने कोई सवाल पूछा तो वह क्या जवाब देगी।

पर माँ ने बस इतना भर कहा, ''अरे तब तो तुम्हें बहुत ही बुरा लगा होगा।''

तोत्तोचान ने राहत की साँस ली। उसे लगा माँ ज़रूर यह समझ गई है कि ऐसी परिस्थिति में पड़कर अगर तोत्तोचान से माँ की पसंदीदा फ्रॉक फट जाती है तो इसमें उस बेचारी का क्या दोष?

पर ज़ाहिर है कि माँ ने छुरों वाली कहानी पर कतई विश्वास नहीं किया था। पीठ पर फेंके गए छुरों से आख़िर चोटें भी तो लगतीं। और फिर तोत्तोचान घटना से डरी भी न थी। माँ को विश्वास था कि उसने यह कहानी बनाई है। पर तोत्तोचान अपनी बात इस तरह बना-सँवारकर कभी कहती नहीं थी। माँ यह समझ गई कि फ्रॉक के फटने का तोत्तोचान को बेहद अफ़सोस है। तभी उसे कहानी बनानी पड़ी है। पर माँ एक बात अरसे से जानना चाह रही थी और उसे लगा कि यह सही मौक़ा है।

''यह तो मैं समझ गई कि तुम्हारी फ्रॉक छुरों से फट जाती है। पर तुम्हारी चड्डियाँ हर दिन कैसे फट जाती हैं?'' माँ यह समझ ही न पाती थी कि लेस से सजी-सजाई उसकी चड्डियाँ रोज़-रोज़ पीछे से कैसे फट जाती थीं। उसे चड्डियों का गन्दा होना या फिसलपट्टी से फिसलते हुए घिस जाना तो समझ आता था, पर हर दिन यों फटना नहीं।

तोत्तोचान ने कुछ देर विचारा तब कहा, ''देखो, जब कोई बाड़ा कँटीले तारों का बना हो और उसके नीचे खुदाई कर उसे पार करना हो तो घुसते समय फ्रॉक या स्कर्ट और वापस बाहर निकलते समय चड्डियाँ तो फटेंगी ही। और फिर हर बार घुसते समय, 'क्या मैं अन्दर आ सकती हूँ?' और लौटते समय, 'अच्छा, तो अब विदा' भी तो

सभी चित्र : विवेक

कहना पड़ता है।'

माँ ने पूछा, ''क्या ऐसा करने में बहुत मज़ा आता है।''

''तुम करके तो देखो'', तोत्तोचान ने प्रश्न पर अचम्भा करते हुए कहा, ''बड़ा मज़ा आएगा। और तुम्हारी चड्डियाँ भी फट जाएँगी।''

. यह खेल जो तोत्तोचान ने ईजाद किया था और जिसमें उसे इतना आनन्द आता था, कुछ यों था :-

सबसे पहले एक काली ज़मीन का टुकड़ा जिसका बाड़ा कँटीले तारों से बना हो, ढूँढना पड़ता था। ''माफ़ करना क्या मैं अन्दर आ जाऊँ'' का तरीक़ा यह था कि कँटीले तार कुछ ऊपर उठाकर, माटी में एक गड्ढा खोदना पड़ता था। तब पेट के बल रेंगकर उस पार पहुँचना होता था। अन्दर पहुँचने के बाद पिछले गड्ढे के ही पास एक दूसरा गड्ढा खोदकर ''अच्छा तो अब विदा'' कहना होता था.। तब रेंगकर वापस लौट आया जा सकता था। तोत्तोचान की माँ को अब कुछ-कुछ समझ आने लगा था कि बाहर निकलते समय चड्डियाँ तारों में उलझकर कैसे फटती थीं। और फिर यह प्रक्रिया बार-बार दोहराई जाती थी। हर बार ''क्या मैं अन्दर आ जाऊँ' कहकर गड्ढा खोदना और बाहर निकलते समय ''अच्छा तो अब विदा'' कहकर वापस रेंगकर लौटना। फ्रॉक, चड्डियाँ तो फटती हीं। तोत्तोचान बड़ी तन्मयता से तारों के एक छोर से दूसरे छोर तक रेंगती रेंगती आती जाती रहती। चड्डियों के फटने में आश्चर्य तब कैसा?

ऐसे किसी खेल की कल्पना करना जो बड़ों को थका भी दे और ऊबाऊ भी लगे, बच्चों के लिए बड़े ही मज़े की बात हो सकती है। तोत्तोचान के गन्दे हाथ, मिट्टी से भरे नाखूनों और कानों को देखकर माँ को कुछ जलन हुई। साथ ही हेडमास्टर साहब के लिए मन में आदर भाव बढ़ा। आख़िर उन्होंने ही तो सुझाया था कि बच्चों को ऐसे कपड़े पहनाएँ जिन्हें वे जी भरकर गन्दे कर सकें। यह इस बात का एक और प्रमाण था कि वे बच्चों को बखूबी समझते थे।

माथापच्ची

(1)

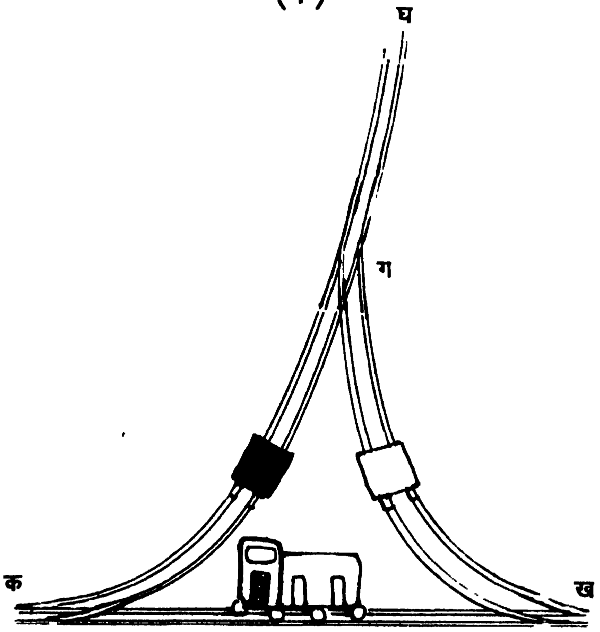

यह एक रेलवे स्टेशन की साइडिंग वाली रेल पटरियाँ हैं। **क ख** मुख्य पटरी है और **ग घ** साइडिंग के लिए बनी जगह। **क ख** पटरी पर एक इंजन खड़ा है, **ख** की ओर मुँह किए। **क घ** पर मालगाड़ी का एक काले रंग का डिब्बा है जबकि **ख घ** पर सफ़ेद रंग का।

राजन को इन्जन ड्राइवरी की परीक्षा में यह सवाल दिया गया है कि वह काले और सफ़ेद डिब्बों की जगह आपस में बदल दे। इसके लिए वह साइडिंग वाले **ग घ** हिस्से की मदद ले सकता है पर उसमें एक बार में सिर्फ़ एक डिब्बा या इन्जन ही खड़ा किया जा सकता है। उसको यह काम सिर्फ़ 6 बारियों में करना था। और बारियाँ हर बार इन्जन के साथ डिब्बों की कपलिंग जोड़ने या खोलने से गिनी जाएँगी।

राजन ने तो परीक्षा पास कर ली और ड्राइवर
1 बन गया। अब तुम्हें भी इस सवाल का हल ढूँढना है।

(2)

राजू के शहर में हैजा फैला हुआ है। राजू की माँ को अपने परिवार की सेहत की चिंता सता रही है और राजू को अपने मछलीघर की मछलियों की।

हैजे से बचाव के लिए माँ ने पीने और खाना बनाने का पानी उबालकर काम में लाना शुरू कर दिया है। उधर राजू ने आज स्कूल से आकर मछलीघर को ख़ाली करके उसमें मटके का ताज़ा, ठण्डा पानी भरा है। और फिर मछलियों को वापस उसमें डाल दिया।

पर यह क्या? राजू जब रात को मछलियों को चारा खिलाने पहुँचा तो उसकी सारी मछलियाँ मरी पड़ी थीं। उसकी तो हालत खराब हो गई। बहुत रोया-पीटा वो। और अन्त में उसने मछलियों के मरने का कारण हैजा मान लिया। क्या उसका मानना सही है? और क्यों?

(3)

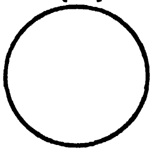

इस गोले को अगर 4 सीधी लकीरों से काटा जाए तो अधिक-से-अधिक कितने टुकड़े मिलेंगे?

(4)

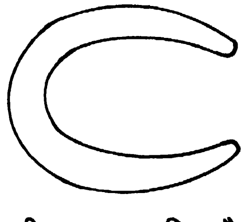

यह एक घोड़े की नाल का चित्र है। क्या तुम सिर्फ़ दो सीधी लकीरें खींचकर इसके 6 टुकड़े कर सकते हो? टुकड़े किसी भी आकार के हो सकते हैं।

(5)

एक व्यापारी तेल का धंधा करता था। वह जितने में तेल ख़रीदता, उसी भाव से बेच देता। और इतना सीधा था वह कि मिलावट भी नहीं करता था। बस थोड़ा–सा विज्ञान ज़रूर लगाता था और उसी से उसे इतना मुनाफ़ा होता कि मज़े से दिन गुज़ारता। क्या करता होगा वह? तुम भी दिमाग़ लगाओ।

(6)

झट से सोचकर बताओ कि 1 से 100 तक की गिनती के बीच में 9 का अंक कितनी बार आता है?

(7)

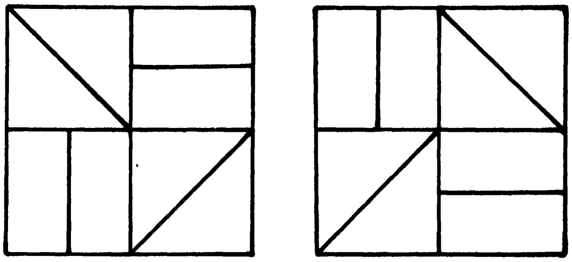

क्या ये दोनों डिब्बे एक ही हैं? क्या तुम्हें नहीं लगता कि पहले को सिर्फ़ थोड़ा घुमाकर रखा जाए तो वह दूसरे जैसा दिखेगा?

वर्ग पहेली – 39

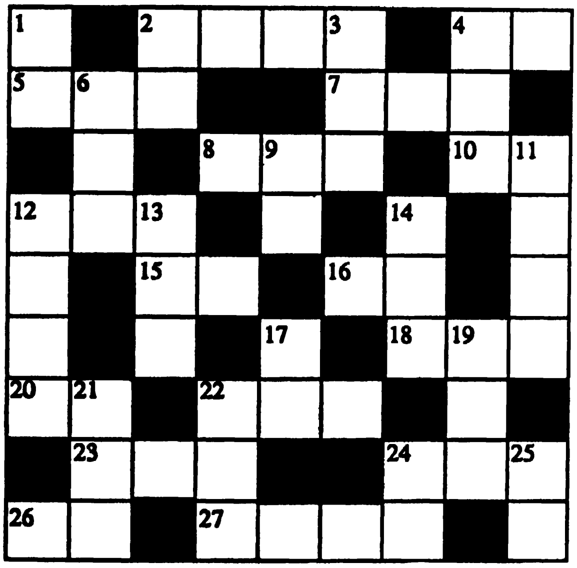

संकेत : बाएँ से दाएँ

2. बरसने को आतुर काले बादलों का समूह (4)
4. घुटना (2)
5. हर सबक में है विपत्ति (3)
7. महाराष्ट्र की वह जगह जहाँ पिछले साल भीषण भूकम्प आया था (3)
8. शरारत की काट–छाँट में है काट–छाँट! (3)
10. चना में है एक कला (2)
12. नौ के आगे हाथ जोड़ दो (3)
15. ठकाठक में लकड़ी (2)
16. संस्कृत भाषा में मेरा (2)
18. चरचा तकली में एक पक्षी (3)
20. थाह कब मिलेगी में है कहानी (2)
22. माँ (3)
23. पलायन में ढूँढो पशुओं की पीठ पर कसा जाने वाला बोझ रखने का गद्दा (3)
24. अब रूही की भौंह देखो (3)
26. एक औज़ार, मिलना (2)
27. मालिक या आभूषण (4)

संकेत : ऊपर से नीचे

1. कतार में है आला (2)
2. वह जगह जहाँ तुम रहते हो (2)
3. बसन्त में खिलने वाला एक लाल फूल (3)
4. आग लगाना (3)
6. अनलहक़ में कंठ ढूँढो (3)
9. पूर्णिमा (2)
11. चबाकर खाओ तो बनो निडर, चतुर (4)
12. समुद्री जहाज़ों के लड़ाके (4)
13. बीकानेर की छोटी थाली बनाओ (3)
14. फेरी करके बेचने वालों की दुकान (3)
17. स्मृति (2)
19. तालाब ख़ाली करो तो ज़रूरत पूरी होगी (3)
21. स्थापित करना (3)
22. मन (3)
24. जो जन्मा ही न हो (2)
25. नींद (2)

सर्वशुद्ध हल भेजने वालों को चकमक तीन–माह तक उपहार में भेजी जाएगी। हल के लिए वर्ग पहेली की जाली को चकमक से काटकर न भेजें बल्कि उसमें जो शब्द आने वाले हों उन्हें संकेत के ही नम्बर देकर लिख दें। वर्ग पहेली– 39 का हल दिसम्बर, 94 अंक में देखें।

आ गया है सावन

खोल दिए हैं धरती ने क्यों
अपने हरे गलीचे,
थाल सजाकर खड़े हो गए
क्यों ये बाग–बगीचे ॥

नाच रही क्यों बिजली, बादल
बजा रहे क्यों बाजा,
जंगल–जंगल खिला–खिला क्यों
मौसम ताज़ा–ताज़ा

नदिया किसके लिए जा रहीं
लेकर दूध–कटोरे,
बोल रही है क्यों कोयलिया
नाच रहे क्यों मोरे।

कोना–कोना साफ़ कर रही
हैं क्यों व्यस्त हवाएँ,
और नहाकर खड़ी हो गई
हैं क्यों सभी दिशाएँ।

नहीं समझ पाए क्या अब तक
तुम इन सबके माने,
अरे आ गया है सावन
गर्मी से हाथ मिलाने।

❑ दामोदर अग्रवाल

चित्र : शोभा घारे

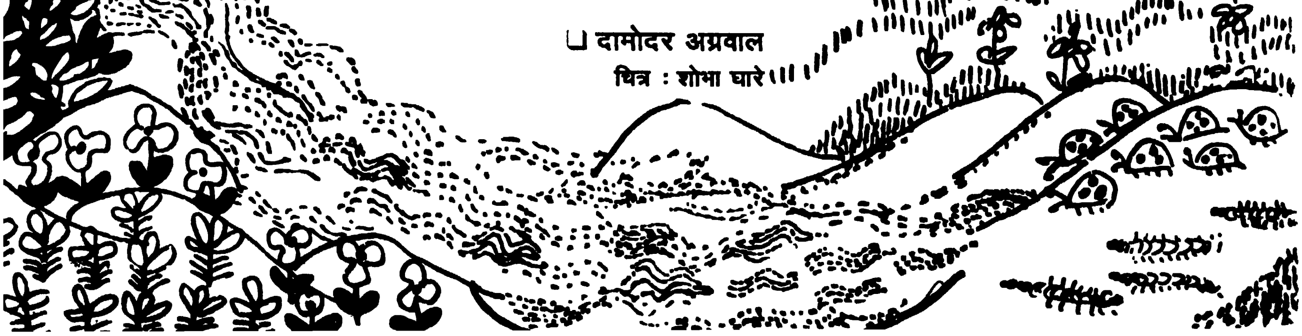

अशोक

अशोक का पेड़ तुम लोगों ने कहीं न कहीं ज़रूर देखा होगा। किसी तीज त्यौहार या उत्सव के समय दरवाज़ों पर सजावट के लिए पत्तों की माला बनाकर लटकाई जाती है। यह पत्ते आमतौर पर अशोक के या आम के होते हैं। यह पेड़ दक्षिणी एशिया का मूल निवासी है परन्तु लगभग सारे एशिया में पाया जाता है।

खासतौर पर भारत, बर्मा, मलाया, चीन, सुमात्रा में तो खूब मिलता है। यह पेड़ सारे साल हरा–भरा रहता है। इस पेड़ की औसत ऊँचाई नौ मीटर होती है। पेड़ का तना सीधा होता है। डंगालें सुन्दर पत्तों से भरी नीचे की ओर झुकी होती हैं। कुल मिलाकर पेड़ देखने में बड़ा–ही सुन्दर होता है।

इस पेड़ के पत्ते लम्बे, गहरे हरे रंग के होते हैं। अशोक के पेड़ में फूल छाने का समय फरवरी से मई तक का होता है। फूल शुरू में नारंगी–से रंग के और बाद में सिन्दूरी रंग के हो जाते हैं। फूल गुच्छों में खिलते हैं। उनमें भीनी–भीनी सी खुशबू आती है जो रात में ज़्यादा महसूस की जा सकती है। फूल बहुत सुन्दर होते हैं। अक्सर देखा गया है कि अशोक के सभी पेड़ों में फूल नहीं खिलते। जिनमें खिलते भी हैं, बहुत कम।

इस पेड़ में फल बहुत कम आते हैं। और इसके सभी पेड़ों में फल नहीं लगते। फल इमली की तरह लाल रंग का होता है। यह गूदेदार फल होता है इसका छिलका मोटा चमड़े जैसा होता है। फल में चार से आठ तक बीज होते हैं। इस पेड़ की छाल गहरे भूरे रंग की और कभी कभी लगभग काले रंग की होती है। पेड़ की लकड़ी हल्के कत्थई से रंग की होती है।

अशोक के पेड़ का उपयोग विभिन्न प्रकार की दवाइयों में खूब होता है। इसके पत्ते सजावट में इस्तेमाल होते हैं, फूल भी गहनों की तरह उपयोग किए जाते हैं। फल दवाओं में तो काम आता ही है साथ ही आसाम में इसे सुपारी की तरह खाया जाता है। पेड़ की छाल, रस, जड़ सभी दवाओं के रूप में उपयोगी होते हैं। इसका बीज भी बहुत उपयोगी होता है।

अशोक का पेड़ बीज से आसानी से लगाया जा सकता है। उत्तरी भारत में इसे शुरू में कुछ समय तक गर्म हवाओं से बचाने के लिए छायादार जगह में रखा जाता है। दक्षिणी और पूर्वी भारत में अशोक के पेड़ बहुत आसानी से लगाए जा सकते हैं।

❑❑❑

कहानी

उड़ने का सुख

❑ से.रा. यात्री

मोनू ने चिड़िया बेचने वाले से एक छोटी–सी रंग–बिरंगी चिड़िया ख़रीदी। चिड़िया के साथ उसने चिड़िया का पिंजड़ा भी ख़रीद लिया।

मोनू सुबह–शाम छोटी–छोटी प्यालियों में पानी और चने या मूँग की भीगी दाल डालकर पिंजड़े में रखता और पिंजड़े के पास देर तक बैठा रहता।

सुबह आँखें खुलते ही अपने सिरहाने स्टूल पर रखे पिंजड़े पर उसकी नज़र जाती तो वह होठों से सीटी बजाकर चिड़िया का ध्यान अपनी ओर खींचता। रात को सोने से पहले वह चिड़िया से बातें करता रहता था।

हालाँकि चिड़िया छोटी–सी ही थी पर फिर भी चिड़िया के लिए वह पिंजड़ा छोटा ही पड़ता था। वह अपने पिंजड़े में अक्सर उदास बैठी रहती थी। मुंडेर पर आकर बैठने वाली चिड़ियों की तरह वह चहचहाती भी नहीं थी। मोनू चिड़िया को खुश रखने के लिए कभी रोटी मसलकर चूरमा बनाता, कभी पिंजड़े में बाजरा या चावल डालता। कभी–कभी मोनू की माताजी भी चिड़िया की ख़ैर–ख़बर लेती रहती थीं।

मोनू जितने समय भी घर में रहता बराबर चिड़िया के पिंजड़े के आसपास ही मंडराता रहता था। चिड़िया कभी–कभी फुदककर उड़ने की कोशिश करती मगर पिंजड़े की लोहे की तीलियों से टकराकर रह जाती। अपनी ओर से मोनू चिड़िया को बहुत खुश रखने का प्रयास करता रहता था पर पिंजड़े में बन्द वह एकाकी पंछी चहचहाना तो जैसे भूल ही गया था।

मोनू के पिता प्रकाश बाबू ने उसे कई बार प्यार से समझाया बेटा, ''जब से तुमने यह मुनिया चिड़िया ख़रीदी है, हर समय इसी के खेल में लगे रहते हो। इस तरह तो तुम्हारी सारी पढ़ाई ही चौपट हो जाएगी। क्या यह नहीं हो सकता कि तुम इस चिड़िया को पिंजड़े से निकालकर मुंडेर पर बिठा दो। और वहीं दो प्यालियों में इसके लिए दाना-पानी रख दो?''

पर मोनू को चिड़िया से बहुत लगाव हो गया था और वह उसे पिंजड़े से मुक्त करने को तैयार नहीं हो पाता था। वह पिताजी से कह देता था, मैंने इसे उड़ाने के लिए थोड़े ही लिया है। आप देखते नहीं हैं कि मैं इसे कितना प्यार करता हूँ।''

एक दिन प्रकाश बाबू के मित्र सरीन साहब ने भी मोनू को समझाया, "बेटे! यह आकाश में उड़ने वाला आज़ाद पंछी है। भगवान ने इसे नन्हें-नन्हें, रंग-बिरंगे पंख उड़ने के लिए और गला गाने के लिए दिया है। यह पेड़ों की शाखों पर बैठकर गाएगा तो बहुत-बहुत खुश होगा। तुम्हारा पिंजड़ा तो इतना छोटा है कि यह इधर-उधर उड़ तक नहीं सकता।'' पर मोनू को सरीन साहब की बात भी अच्छी नहीं लगी और वह पंछी को पिंजड़े में ही रखने की अपनी ज़िद पर अड़ा रहा।

इसी दौरान एक दिन नगर में दंगा हो गया और पूरे शहर में कर्फ़्यू लग गया। प्रकाश बाबू अख़बार के दफ़्तर में काम करते थे इसलिए उन्हें दफ़्तर जाने के लिए कलेक्टर साहब के दफ़्तर से पास मिल गया। मगर मोनू को स्कूल बन्द हो जाने के कारण घर में ही रहना पड़ गया।

कर्फ़्यू अनिश्चित काल के लिए लगा था और नगर की स्थिति सामान्य होने से पहले कर्फ़्यू के हटने की कोई सम्भावना नहीं थी। शुरू-शुरू में दो-तीन दिन तक तो स्कूल बन्द होने की मोनू को बहुत खुशी हुई क्योंकि वह घर में रहकर खूब उधम मचा सकता था। मगर जब कर्फ़्यू लम्बा खिंचने लगा और मोनू का घर की दहलीज़ से निकलना भी कठिन पड़ गया तो वह बेचैन रहने लगा। टी.वी. के कार्यक्रम देखते-देखते उसे उकताहट होने लगी। मोहल्ले के लड़कों से भी वह बाहर जाकर बातें नहीं कर सकता था क्योंकि गली में सारे दिन और पूरी रात बन्दूकधारी पुलिसवाले घूमते रहते थे।

मोनू के पिताजी जब भी घर लौटते, मोनू उनसे बस एक ही बात पूछता, ''पापा जी कर्फ़्यू कब हटेगा?''

प्रकाश बाबू भी एक ही जवाब देते, "मोनू बेटे, शहर की हालत सम्हलते ही कर्फ़्यू खुल जाएगा। फिर तुम बाहर निकल सकते हो।''

जब कर्फ़्यू लगे दस-बारह दिन निकल गए तो लाऊड-स्पीकर पर घोषणा सुनाई पड़ी कि अगले दिन सुबह आठ बजे से दोपहर बारह बजे तक कर्फ़्यू में ढील दी जाएगी। अगर शहर में अमन रहा तो कर्फ़्यू में और भी ढील दी जाएगी।

अमन का अर्थ मोनू की समझ में नहीं आया तो उसने अपने पिताजी से उसका मतलब पूछा। प्रकाश बाबू ने बतलाया, ''बेटे अमन का मतलब शान्ति से है। अगर शहर में कर्फ़्यू हटने से शान्ति बनी रहेगी तो आगे कर्फ़्यू को ज़्यादा देर के लिए हटा दिया जाएगा।''

मोनू कर्फ़्यू हटने की बात सुनकर खुशी से झूम उठा और बोला, ''तो गली में जाने से पुलिस अब नहीं रोकेगी न?''

प्रकाश बाबू बोले, ''हाँ। कल सुबह आठ बजे से दोपहर बारह बजे तक तुम घर के बाहर निकल सकते हो।''

इसी समय बाहर बरामदे में खड़खड़ाहट की आवाज़ आई और साथ ही चिड़िया के चीखने का स्वर भी सुनाई पड़ा। मोनू दौड़कर कमरे से बाहर गया और उसने देखा कि पता नहीं कहाँ से एक बिल्ली आ गई थी और पिंजड़े की तीलियों पर पन्जे मार रही थी। छोटी–सी चिड़िया बिल्ली के डर से लगातार पंख फड़फड़ा रही थी।

मोनू को देखते ही बिल्ली भाग गई। मोनू ने चिड़िया का पिंजड़ा उठाया और कमरे में ले गया। वह चिन्ता के स्वर में अपने पिता से कहने लगा, ''पापा बाहर एक बिल्ली आ गई थी और मुनिया का पिंजड़ा तोड़ रही थी।''

मोनू के पिता बोले, ''बेटा! बिल्ली को इस घर में चिड़िया के होने का पता चल गया है। बिल्ली अब बार–बार आएगी और जब तुम घर में नहीं होंगे तो चिड़िया का पिंजड़ा तोड़ने की कोशिश करेगी और वह किसी दिन इस नन्हीं–सी चिड़िया की जान ले लेगी।''

मोनू चिड़िया की जान जाने की आशंका से काँप उठा और सोचते हुए पूछने लगा, ''फिर क्या करें पापा?''

प्रकाश बाबू ने पिंजड़े की चिड़िया के बारे में कुछ नहीं कहा। उन्होंने मोनू से पूछा, ''अच्छा मोनू बेटे, यह तो बतलाओ अगर कर्फ़्यू पूरी तरह से हट जाए तो तुम्हें कैसा लगेगा।''

मोनू खुशी से ताली बजाकर बोला, ''फिर तो बड़ा मज़ा आ जाएगा। हम घर से बाहर जा सकेंगे। मैं अपने स्कूल जाने लगूँगा।''

''बस तो तुम यही बात पिंजड़े में बन्द चिड़िया के बारे में समझो। इस छोटे–से पिंजड़े की क़ैद से जब यह चाहे जहाँ उड़ सकेगी तो इसे कितनी खुशी होगी।''

पिता की बात सुनकर मोनू की आँखों में सोचने का भाव उभर आया और अगले क्षण ही उसने पिंजड़ा उठाकर कहा,"चलो पापा, ऊपर छत पर चलकर मुनिया को पिंजड़े से आज़ाद कर देते हैं।"

प्रकाश बाबू के चेहरे पर मुस्कान थिरक उठी। वे मोनू के साथ छत पर चले गए। मोनू ने खुली छत पर पिंजड़ा रखा और पिंजड़े का सींखचा खोल दिया। चिड़िया पिंजड़े से बाहर निकलकर पिंजड़े के आसपास घूमने लगी जैसे उड़ना भूल गई हो। पर थोड़ी देर बाद ही वह उड़ी और मुंडेर पर जा बैठी।

कुछ क्षणों के बाद चिड़िया ने अपने पंख पसारे और आकाश में उड़ गई। चिड़िया का पिंजड़ा ख़ाली देखकर मोनू के चेहरे पर उदासी छा गई। लेकिन तभी उसके पिता ने उसका कंधा थपथपाकर सामने के पीपल के पेड़ पर बैठी सैकड़ों चिड़ियों की ओर संकेत किया, देखो इतनी सारी आज़ाद चिड़ियाँ चहचहाती हुई कैसी सुन्दर लग रही हैं।"

मोनू ने भोलेपन से पूछा, "पापा क्या हमारी चिड़िया भी उनमें ही जा मिली होगी।"

प्रकाश बाबू हँसकर बोले, तुम्हारी चिड़िया भी उनमें हो सकती है मोनू। हो सकता है वह कभी हमारी मुंडेर पर भी आकर बैठ जाए।"

मोनू पिता की बात से आश्वस्त होकर बोला, "तो ठीक है। अब मैं उसके लिए छत की मुंडेर पर ही दाना रख दूँगा और पानी की प्याली भी यही टिका दूँगा।"

❑❑❑

सभी चित्र : हुताराम अधिकारी

लटकना

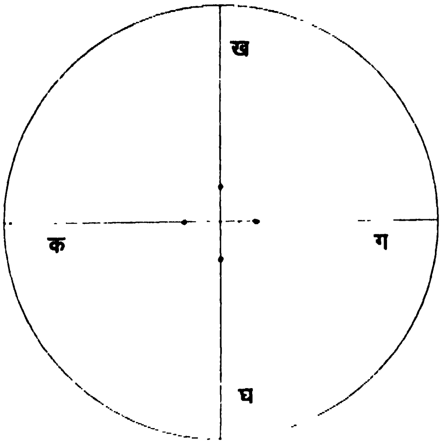

कागज़ की सुन्दर आकृतियाँ बनाकर तुम अक्सर अपने घर और कक्षा को सजाते होगे। इस काम में सचमुच बड़ा मज़ा आता है। इस बार हमें एक बहुत ही सुन्दर और मज़ेदार आकृति हाथ लगी। चलो इसे बनाते हैं। इसके लिए कागज़, पेन्सिल, परकार कागज़ काटने का चाकू या ब्लेड और कैंची ले लो।

सबसे पहले इस चित्र में दिखाए अनुसार तुम्हें अपने कागज़ पर निशान बनाने हैं। इसके दो तरीके हो सकते हैं। एक तो यह कि तुम इसे चकमक में से ट्रेस करके बना लो। दूसरा तरीक़ा है कि ख़ुद परकार, पेन्सिल, स्केल की मदद से चित्र में दिखाई आकृति बनाओ। पहला तरीक़ा इस्तेमाल करना चाहो तो वो करो और अगर दूसरा तरीक़ा अपनाना चाहो

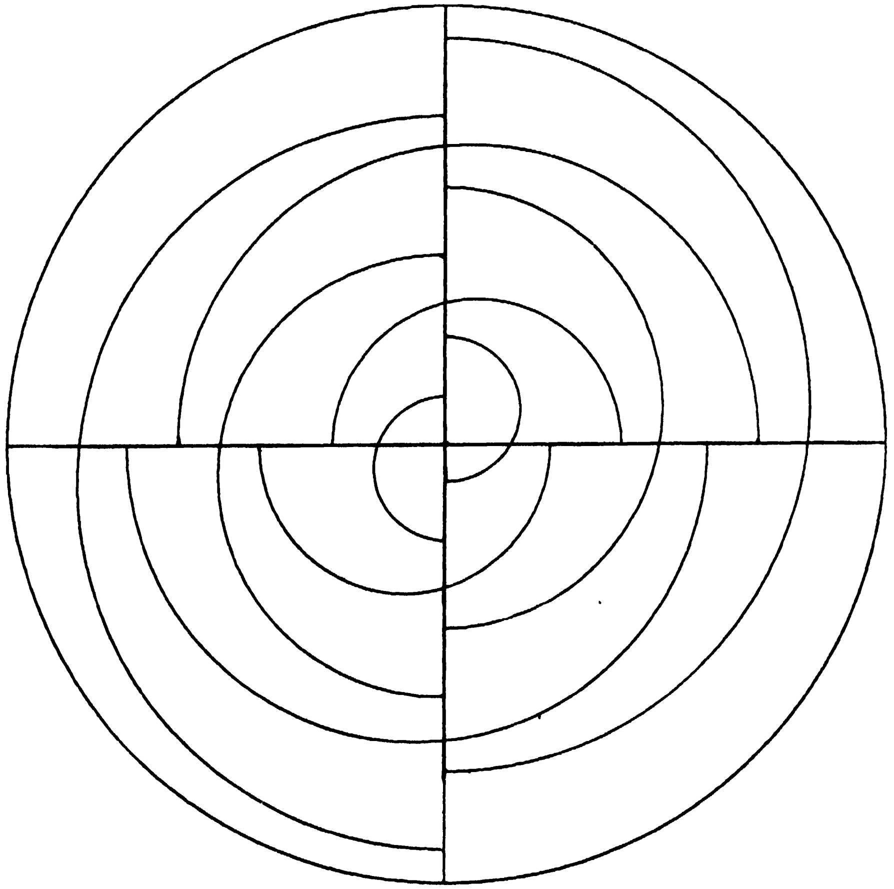

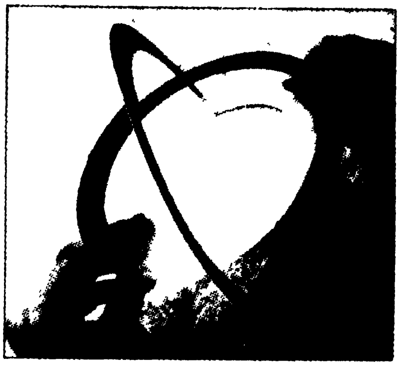
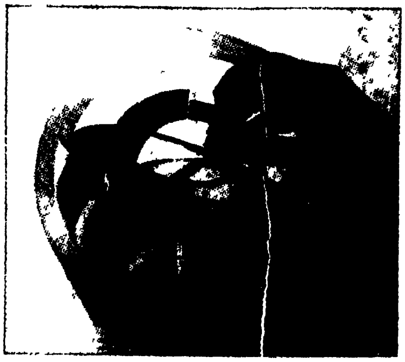

तो कुछ इस तरह शुरू करो।

सबसे पहले परकार से नापकर काग़ज़ पर एक गोला बना लो, इस गोले का व्यास 12 से.मी. रखो। अब केन्द्र बिन्दु को काटती हुई, परिधि से परिधि तक, दो ऐसी सीधी रेखाएँ खींचना हैं जो गोले को चार बराबर हिस्सों में बाँटती हों। इन रेखाओं को नाम दे दो **क, ख, ग, घ**। फिर चारों रेखाओं पर केन्द्र बिन्दु से आधे-आधे से. मी. की दूरी पर एक-एक बिन्दु बना लो। इन बिन्दुओं को नाम दे देंगे तो समझना आसान होगा। तो **क** रेखा पर के बिन्दु का नाम **1**, **ख** रेखा पर बिन्दु **2**, **ग** पर **3**, और **घ** पर **4** नम्बर हो गया।

अब परकार से 5 से.मी. नापकर पहले **1** नम्बर के बिन्दु पर परकार रखकर **क ख** रेखा को मिलाता एक आधा गोला खींच लो। फिर परकार को **2** नम्बर बिन्दु पर रखो और पहले वाले गोले के सामने दूसरा आधा गोला खींचो।

अब परकार से 4 से.मी. नापकर बिन्दु **3** और **4** पर बारी-बारी से परकार रखकर आधे-आधे गोले खींचो। ध्यान रखना दोनों गोले एक-दूसरे के आमने-सामने हों।

बस इसी तरह और भी आधे गोले इस गोले के अन्दर बना सकते हो। इसके लिए चारों रेखाओं पर बिन्दु बदलने होंगे और परकार का माप बदलना होगा। तुम जितना बड़ा गोला लोगे उतने ज़्यादा उसमें आधे गोले बन सकेंगे।

अब चलो इन पर कट लगाते हैं। तुम्हारे काग़ज़ के गोले पर आधे-आधे गोलों के सारे निशान लग चुके हों तो पहले तो गोले को काट कर काग़ज़ से अलग कर लो। फिर आधे गोले वाले निशानों पर ब्लेड से कट लगाओ। देखो यह ध्यान रखना कि कट आधे गोले के निशान पर ही लगे।

सारे कट लग चुके हों तो गोले को हाथों में उठालो और कट लगे हुए गोले जिस जगह पर जुड़े हैं उस जगह पर मोड़ बनाओ। मोड़ इस तरह बनाना है कि गोले एक दूसरे से विपरीत दिशा में रहें। ऊपर दिए चित्र देखो।

यह सुन्दर सी डिज़ाइन तैयार हो गई। एक ओर को छेद करके धागे से बाँधकर कहीं लटका दो, चाहो तो कमरे के बीचोंबीच या खिड़की पर।

चर्चा किताबों की

दो उपयोगी पुस्तिकाएँ

ाजस्थान की अरावली पर्वत शृंखला के एक भाग सरिस्का बाघ परियोजना चल रही है। सरिस्का त्र इस पर्वत शृंखला के उन बहुत थोड़े से हिस्सों है जहाँ पहाड़ों पर अब भी पेड़–पौधे, पक्षी, ानवर आदि पाए जाते हैं। लेकिन इन सबको बनाए खने के लिए वहाँ आसपास रहने वाले लोगों मे र्यावरण के प्रति चेतना जगाना एक प्रमुख काम है।

पर्यावरण शिक्षण केन्द्र, अहमदाबाद ने पिछले छ सालों में सरिस्का क्षेत्र के आसपास के गाँवों के द्यार्थियों के लिए पर्यावरण आधारित एक शिक्षण ार्यक्रम शुरू किया है। इसका मुख्य उद्देश्य द्यार्थियो को अपने आसपास स्थित इस प्राकृतिक भाग का महत्व उनके जीवन से जोडकर समझाना ।

प.शि.के. ने इस हेतु सरिस्का के आसपास के भिन्न शासकीय विद्यालयों में पर्यावरण अध्ययन को र नियमित गतिविधि बनाने पर न केवल ज़ोर दिया ल्कि सफलता भी हासिल की है। इस काम में होंने स्थानीय संस्थाओं की मदद भी ली है।

पर्यावरण अध्ययन के इस कार्यक्रम में पक्षियों ा जानवरों का निरीक्षण तथा अध्ययन एक त्वपूर्ण हिस्सा है।

प.शि.के. ने इस हेतु दो पुस्तिकाओ का ास तथा प्रकाशन किया है। इस प्रकाशन को होंने प्रकृति परिचय शृंखला नाम दिया है।

ी निरीक्षण पुस्तिका

किताब में एक सामान्य पक्षी का परिचय, योगिता, पक्षी के अंगो के नाम, पक्षियों का वर्णन ने का तरीका, आकार नापने का तरीका, पक्षियों चोंच तथा पैरों के प्रकार, पक्षियों के व्यवहार दे के बारे में संक्षिप्त में बताया गया है। और फिर ाशः एक पेज पर एक पक्षी के चित्र के साथ ाका संक्षिप्त विवरण है और कुछ सरल प्रश्न।

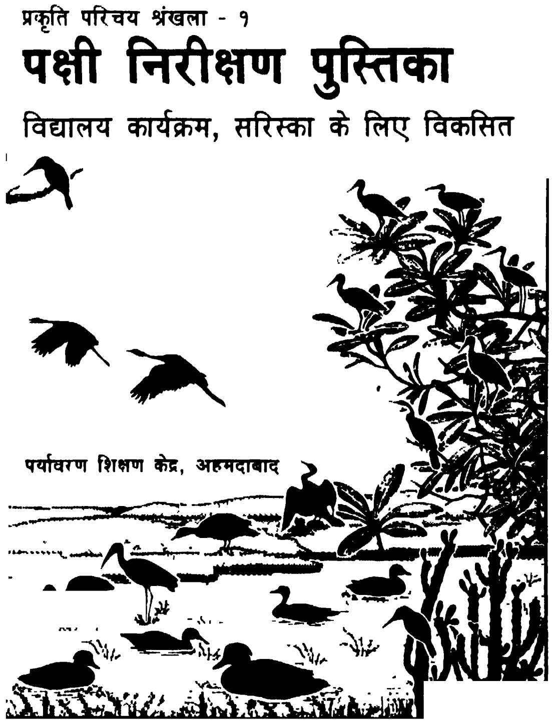

सामने का पृष्ठ डायरीनुमा है, जिस पर पक्षी निरीक्षणकर्ता को अपने अवलोकन यानी पक्षी का आकार, रंग, प्रमुख विशेषता यानी नर–मादा में अन्तर, बच्चों का रंग–रूप, पक्षी का व्यवहार, आवाज़, घोंसले का वर्णन, पक्षी प्रवासी है या स्थानीय आदि लिखना है। इस तरह से इसमें छियालीस पक्षियों के बारे में वर्णन है। पुस्तिका के अन्त में पक्षियों का वैज्ञानिक वर्गीकरण भी दिया है।

ये सभी पक्षी सरिस्का के आसपास पाए जाने वाले पक्षी हैं। लेकिन इनमें से अधिकांश सब जगह पाए जाते हैं। इसलिए यह पुस्तिका सभी क्षेत्रों के लिए उपयोगी हो सकती है।

स्तनधारी परिचय पुस्तिका

यह प्रकाशन शृंखला की दूसरी पुस्तिका है। इसमें सरिस्का के आसपास पाए जाने वाले 37 विभिन्न स्तनधारियों के बारे में क्रमशः विवरण है। हर

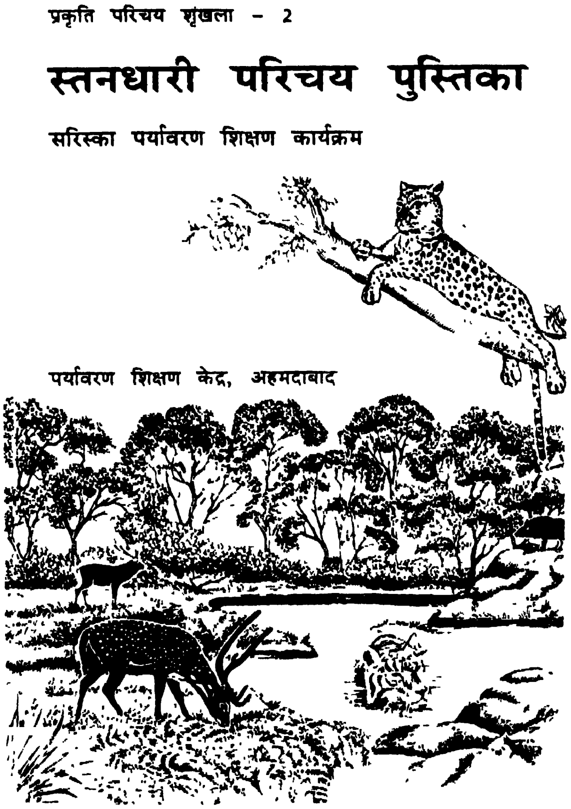

स्तनधारी के विवरण के बाद कुछ सामान्य सवाल पूछे गए हैं, जिनके उत्तर निरीक्षणकर्ता को अपने अवलोकन के आधार पर लिखने हैं। हरेक जीव के बारे में एक तालिका भी भरनी है, जिसमें यह लिखना है कि उस जीव को कहाँ और कितनी संख्या में देखा था, साथ ही वह उस समय क्या कर रहा था।

पुस्तिका के शुरू में स्तनधारियों के सामान्य लक्षण, उनके व्यवहार, खानपान आदि के बारे में संक्षेप में बताया गया है।

दोनों ही पुस्तिकाएँ साफ़-सुथरी छपाई तथा बड़े टाइप वाली हैं। पक्षी तथा जन्तुओं के निरीक्षण में रुचि रखने वालों के लिए उपयोगी हैं।

❑ **राजेश उत्साही**

- ❑ **पक्षी निरीक्षण पुस्तिका – पृष्ठ : 132, मूल्य रु. 25/–**
- ❑ **स्तनधारी परिचय पुस्तिका – पृष्ठ : 128 मूल्य रु. 26/–**
- ❑ **प्रकाशक : पर्यावरण शिक्षण केन्द्र, थलतेज टेकरा, 380 054**

माथापच्ची– हल अगस्त 94 अंक के

1. अगली उल्टी-सीधी एक समान संख्या थी 16061 और बस की रफ़्तार थी 30 कि.मी. प्रति घण्टे।
2. रस्सी क्रमांक. 3
3. सबसे दाहिने सफ़ेद कंचे और सबसे बाएँ काले कंचे की जगहें उभार वाली जगह की मदद से आपस में अदला-बदली कर देंगे। इसी तरह इस सफ़ेद कंचे और एक-एक करके सारे काले कंचों की जगहें नली के उभार की मदद से बदलते जाएँगे। दाहिना सफ़ेद कंचा बाहर आ जाएगा। सारे सफ़ेद कंचे इसी तरह एक-एक कर बाहर आ जाएँगे।
4. गुड्डा के तीन भाई और तीन बहनें हैं।
5. तीन तरीके हैं

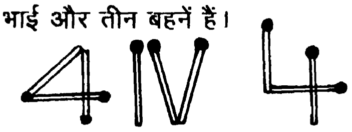

6. (1) पुदीना (2) गोभी (3) पालक (4) मूली (5) बैगन (6) सेम (7) मटर

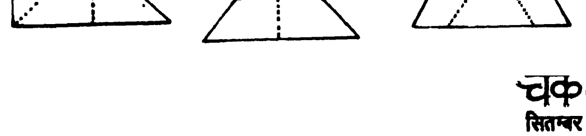

वर्ग-पहेली 36 का हल

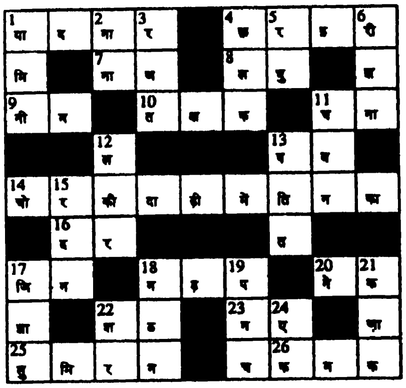

वर्ग पहेली 36 के सर्वशुद्ध हल हमें जिन पाठकों ने भेजे हैं उनके नाम हैं :– सुनीता साहू, सरिता साहू, भखारा; धनेश्वरी चौहान, धरसींवा, तीनों रायपुर; निमेष पालीवाल, मण्डी बामोरा, सागर; पूर्वा जैन, इन्दौर; प्रियंका श्रीवास्तव, थांदला, झाबुआ, आर.डी. सिंह, सोनहत; प्रदीप तिर्की, चन्दौरा, दोनों सरगुजा; सीमादेवी मिश्रा; सत्येन्द्र कुमार तिवारी, नगई; संजीव कुमार तिवारी, मऊगंज; सभी रीवा; श्यामसिंह कौशले, किन्दरई, सिवनी; **सभी म.प्र.।** सुनीता शर्मा, अलवर, राजस्थान। **इन सभी को चकमक तीन माह तक उपहार में भेजी जाएगी।**

तुम भी आना

नदी चढ़ी है आना।
तुम भी आना तुम भी आना
आना तुम भी आना
आए बादल घने उतर के
उनसे हाथ छुआना
हवा गा रही तुम भी गाना
गाने में खो जाना
नदी किनारे गोद धरा की
हरा मखमली बाना
वहीं पेड़ पूरे पर छाया
एक घोंसला
सब चिड़ियों ने मेहमानों के लिए बनाया
उसमें जा सो जाना
रात लोरियाँ नदी गाएगी
पंख पसारे परी आएगी
सुबह गाएगी चिड़िया रानी
तुम्हें जगाने गाना।

❑ नवीन सागर
चित्र : जया

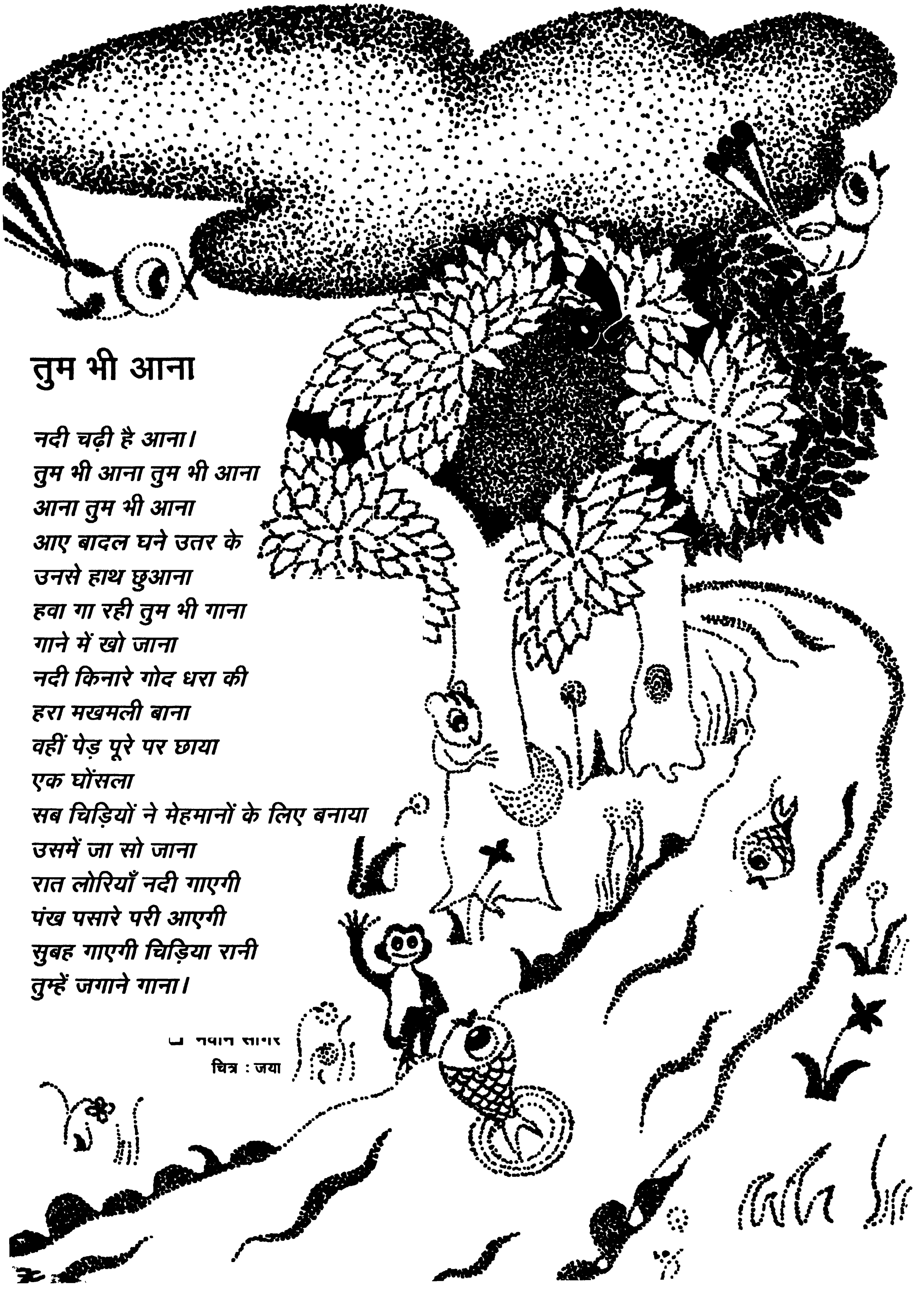

धारावाहिक-13

मनुष्य महाबली कैसे बना!

परियों की कहानी

अगर परियों की कहानियों में हमें विश्वास होता, तो दुनिया में बस दयालु और क्रूर, दृश्य और अदृश्य रहस्यमय प्राणी ही रहते होते। जादू की इस दुनिया में हमें हर समय दुष्ट जादूगरों और भयानक डायनों के जादू–टोने से बचकर रहना पड़ता।

परियों की कहानियों में मेंढकी भी अचानक एक सुन्दर राजकुमारी में बदल सकती है, जबकि एक सुन्दर नौजवान भयंकर साँप निकल सकता है। यहाँ हर चीज़ के अपने ही क़ायदे–क़ानून हैं – मरे हुए लोग ज़िन्दा हो जाते हैं, कटे हुए सिर बोल सकते हैं।

परीकथा को पढ़ते समय हम हर बात पर विश्वास करने को तैयार हो जाते हैं। लेकिन जैसे ही हम किताब को बन्द करते हैं, हम अपनी सचमुच की दुनिया में लौट आते हैं, जहाँ न जादूगर हैं, न डायनें, जहाँ हर चीज़ की व्याख्या की जा सकती है। परी कथा चाहे कितनी ही दिलचस्प क्यों न हो, हम कभी जादू की दुनिया में रहने को तैयार न होंगे, जहाँ दिमाग़ बेकार रहता है और जहाँ आदमी को– अगर वह किसी भेड़ियारूपी मनुष्य या डायन से पहली ही टक्कर से जीता बच निकलना चाहे, तो – राजकुमार की तरह क़िस्मत का धनी बनकर ही पैदा होना होगा।

लेकिन हमारे प्रागैतिहासिक पूर्वजों के ख़्याल से दुनिया ठीक ऐसी ही थी। उन्हें जादू की दुनिया में और असलियत की जिस दुनिया में वे रहते थे उसमें कोई फ़र्क नज़र न आता था। उनका ख़्याल था कि दुनिया में जो भी कुछ होता है, वह दुनिया पर शासन करने वाले भूत–प्रेतों या देवी–देवताओं की बदौलत होता है।

अगर हमें पत्थर से ठोकर लग जाती है और हम गिर जाते हैं, तो हम ख़ुद अपने को और अपने अनाड़ीपन के अलावा और किसी को दोष नहीं देते।

मगर प्रागैतिहासिक मनुष्य अपने को दोष नहीं देता था – वह उस भूत–प्रेत को दोष देता, जिसने पत्थर को उसके रास्ते में रख दिया था।

अगर किसी आदमी को छुरा मार दिया जाता है और वह मर जाता है, तो हम कहते हैं कि उसे छुरे से मार डाला गया।

मगर प्रागैतिहासिक मनुष्य कहता कि वह इसलिए मरा कि जो छुरा उसे घोंपा गया, उस पर टोना किया हुआ था।

वास्तव में प्रागैतिहासिक लोगों को संसार और प्रकृति के बारे में अधिक जानकारी नहीं थी।

और वे सम्भवतः जादू, टोने और इन्द्रजाल में विश्वास करते होंगे। इसका प्रमाण हमें पुरातात्विक खुदाइयों के स्थलों पर मिले तावीज़ों में और गुफाओं के जादू–टोने के चित्रों में मिलता है।

हमारे पूर्वजों का दुनिया के बारे में क्या ख़्याल था!

आदमी के लिए दुनिया में तब रहना बहुत कठिन था, जब वह उसके नियमों को नहीं जानता था। उसका विश्वास था कि हर वस्तु तावीज़ हो सकती है, हर आदमी जादूगर हो सकता है। उसका विश्वास था कि हर कहीं मरे हुए प्राणियों की प्रति–हिंसक और अशान्त आत्माएँ घूमती–फिरती हैं और जीवितों पर टूट पड़ने को तत्पर रहती हैं। शिकार में मारा गया हर जानवर वापस आ सकता है और अपने हत्यारे से बदला ले सकता है। मुसीबत को टालने के लिए आदमी को हर समय मृतात्माओं की ख़ुशामद करनी पड़ती थी और उन्हें चढ़ावे चढ़ाने और शान्त करने की कोशिश करनी पड़ती थी।

अज्ञान डर को पैदा करता है।

और क्योंकि मनुष्य के पास ज्ञान का अभाव था, इसलिए वह महाबली की तरह नहीं, बल्कि एक भयग्रस्त, निरीह आदमी की तरह ही आचरण कर सकता था।

वह अभी तक इस लायक़ नहीं हुआ था कि अपने को महाबली समझ सके। वह संसार के सभी पशुओं से अधिक शक्तिशाली था, उसने मैमथ को भी जीत लिया था, लेकिन प्रकृति की महान शक्तियों की तुलना में, जिनसे निपटना वह नहीं जानता था, वह अब भी बहुत ही शक्तिहीन प्राणी था।

एक असफल शिकार का मतलब हफ़्तों की भुखमरी था। एक अंधड़ पूरे–के–पूरे शिविर को बर्फ़ के नीचे दबा सकता था।

तो फिर मनुष्य को लड़ते रहने की और धीरे–धीरे, क़दम–ब–क़दम प्रकृति की शक्तियों पर हावी होने की तरफ बढ़ने की ताक़त किसने दी?

उसने अपनी शक्ति इस बात से प्राप्त की कि वह अकेला नहीं था।

सारा ही समाज, सारा ही कबीला मिलकर प्रकृति की विरोधी शक्तियों से लड़ता था। वे मिलकर काम करते थे और अपने सामान्य उद्योग के ज़रिए उन्होंने ज्ञान और अनुभव प्राप्त किया।

ठीक है कि वे इस बात को शायद ही अनुभव करते थे। बल्कि इसे वे अपने ही ढंग से समझते थे।

वे नहीं जानते थे कि मानव समाज का क्या मतलब है। लेकिन वे

यह अनुभव करते थे कि वे एक साथ जुड़े हुए हैं, कि एक ही कबीले के लोग असल में एक विराट सहस्त्रबाहु आदमी हैं।

और उन्हें क्या चीज़ एक साथ बाँधती थी?

वे खून के बन्धनों से बँधे हुए थे। लोग बड़े–बड़े परिवारों में रहते थे – बच्चे अपनी माताओं के साथ रहते थे और जब वे बड़े हो जाते और उनके अपने बाल–बच्चे हो जाते, तो भी वे अपने भाई–बहनों, चाचा–चाचियों, माँओं–दादियों के साथ मिलकर ही रहते थे।

इस तरह परिवार की वृद्धि हुई। शिकारी जिस प्रागैतिहासिक समाज में रहता था, वह उसका अपना परिवार, अपना कुल था, जो एक ही सामान्य पूर्वज से पैदा हुआ था। लोगों का विश्वास था कि उनके पास जो भी चीज़ है, उसके लिए वे अपने पूर्वजों के ऋणी हैं। उनके पूर्वजों ने उन्हें शिकार करना और औज़ार बनाना सिखाया था, उन्होंने उन्हें उनके घर दिए थे और आग का उपयोग बताया था।

काम और शिकार करने का मतलब पूर्वजों की इच्छा को पूरा करना था। जो अपने पूर्वजों की इच्छा का पालन करता था, उसकी मुसीबतों और ख़तरों से रक्षा की जाती थी। उनके पूर्वज उनके दैनिक जीवन के लिए एक अदृश्य अंग थे। उनका विश्वास था कि उनकी आत्माएँ हर शिकार पर उनके साथ जातीं, वे आवास में हर समय मौजूद रहती थीं। वे बुरा करने वाले को दण्ड दे सकती थीं और भला करने वाले को पुरस्कृत कर सकती थीं।

इस प्रकार प्रागैतिहासिक मानव के दिमाग़ में सबके हित के लिए किए गए काम अपने पूर्वजों की इच्छा के पालन और पूर्ति के अलावा और कुछ नहीं रहा।

फिर भी, प्रागैतिहासिक मानव अपने श्रम के महत्व को उस तरह नहीं समझता था, जिस तरह हम आज समझते हैं।

हम मानते हैं कि प्रागैतिहासिक शिकारी उसी बाइसन के सहारे रहता और अपने परिवार का पेट भरता था, जिसे वह मारता था। लेकिन उसका विश्वास था कि बाइसन उसको भोजन देता था। आज भी प्राचीन काल के अवशेष–रूप में गाय और पृथ्वी को हम "गऊमाता" और "धरतीमाता" ही कहते हैं। हम गाय से उसकी मरज़ी के बिना उसका दूध ले लेते हैं, मगर कहते फिर भी यही हैं कि गाय हमें दूध देती है।

प्रागैतिहासिक शिकारी का "पोषक" कोई जानवर था – चाहे वह बाइसन हो, या मैमथ, या बारहसिंघा। शिकारी यह नहीं सोचता था कि उसने जानवर को मारा है, उसका विश्वास था कि उसने उसे अपना माँस और अपना चमड़ा अपनी मरज़ी से दिया है। अमरीकी आदिवासियों का विश्वास था कि किसी जानवर को उसकी इच्छा के बिना नहीं मारा जा सकता। अगर कोई बाइसन मारा गया, तो वह

केवल इसलिए कि वह लोगों की ख़ातिर अपना बलिदान करना चाहता था, क्योंकि वह मारा जाना चाहता था।

बाइसन क़बीले का पोषक और रक्षक था। साथ ही, लोग अपने पूर्वज को भी क़बीले का रक्षक मानते थे।

और इसलिए प्रागैतिहासिक लोगों के दिमाग़ में (जिन्हें, जिस दुनिया में वे रहते थे, उसके बारे में अभी बड़ी ही अस्पष्ट धारणा थी) रक्षक–पूर्वज और क़बीले का पोषण करने वाला रक्षक–पशु दोनों एकाकार हो गए।

"हम बाइसन की संतान हैं" शिकारी कहते थे। और सच ही वे विश्वास करते थे कि बाइसन ही उनका पूर्वज है।

अपने दैनिक श्रम में मनुष्य पशुओं से निकट रूप से सम्बद्ध था। किन्तु वह ऐसे किसी सम्बंध को नहीं समझ सकता था जो रक्त सम्बंध न हो। जब वह किसी जानवर को मारता, तो वह उसे अपना बड़ा भाई कहकर उससे माफ़ी माँगता था। अपने नाचों और जादू–टोनों में वह अपने पशु–भ्राता की नक़ल करने की कोशिश करता था – वह उसका चमड़ा ओढ़ लेता था और उसकी चाल–ढाल की नक़ल करता था।

आदमी ने अभी अपने को मैं कहना नहीं सीखा था। वह अभी तक अपने को कुल का एक अंग और औज़ार ही समझता था। हर कुल का अपना नाम और अपना टोटेम (गणचिन्ह) था। यह किसी पशु का, उनके पूर्वज और रक्षक का नाम था। एक कुल का नाम "बाइसन" था, दूसरे का "रीछ", तो तीसरे का "हिरन"। कुल के सदस्य एक–दूसरे के लिए जान पर खेल जाने को तैयार रहते थे। वे कुल की रूढ़ियों को अपने टोटेम की इच्छा मानते थे और उनके लिए टोटेम की इच्छा ही क़ानून थी।

(अगले अंक में जारी)
'मनुष्य महाबली कैसे बना' से साभार
प्रस्तुति : राजेश उत्साही

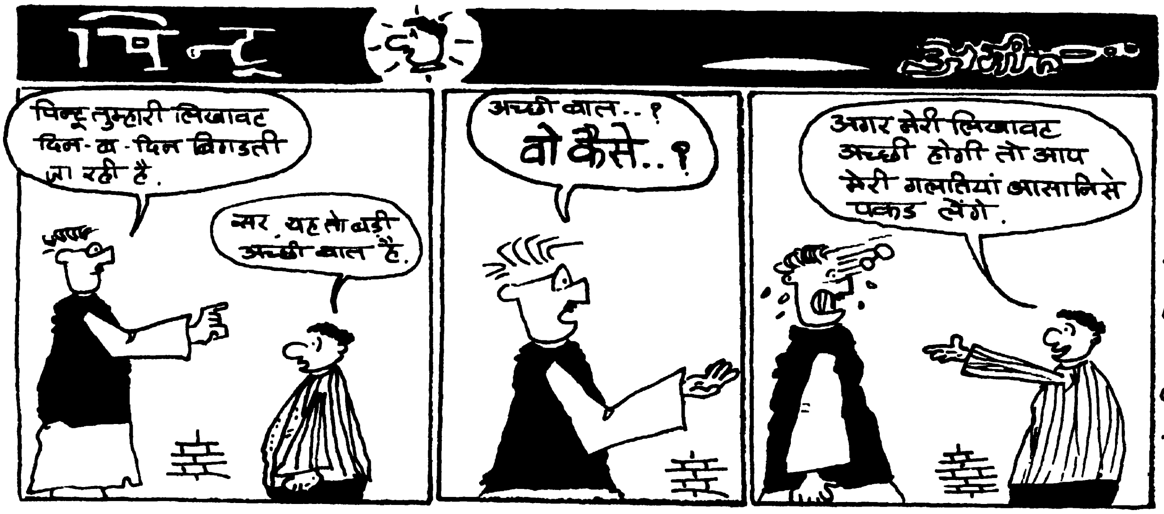

व्यंग्य चित्र : अमित कोलकर, पुणे

[illegible] मायरे, आठवी, मसनगाँव, हरदा, म.प्र.

12657